"शुद्धाद्वैत एकेडमी कांकरोली"

(स्थापना, सम्वत् २००० रथोत्सव)

का

संक्षिप्त परिचय—

कार्य (उद्देश्य)

१ प्राचीन साहित्य का संरक्षण, अन्वेषण, प्रकाशन तथा प्रचार।

२. विरोधी साहित्य की उपयुक्त आलोचना।

३. साम्प्रदायिक संस्थाओं का नियमन, संगठन एवं उपयुक्त स्थलों पर नवीन संस्थाओं की स्थापना।

४ प्रचारार्थ हिन्दी और गुजराती समाचार पत्रों का सहयोग प्राप्त करना और इसके अभाव में स्वतन्त्र रूप से प्रयत्न।

५ सार्वभौम केन्द्रीय पुस्तकालय की स्थापना।

७ इन सब कार्यों के लिए एक विशिष्ट निधि की स्थापना।

विशेष.—

ऐसे विद्वानों और जिज्ञासुओं से सहयोग स्थापित करना जो प्रस्तुत विषय की साहित्य रचना में मनोयोग प्रदान करते हैं।

[सदस्यता के लिये देखो टाइटिल पत्र ३]

"जगतानन्द"

की

विषयानुक्रमणिका

— —:✱— —

गोस्वामिश्री व्रजरत्नलालजी महाराज, सूरत.
सभापति शुद्धाद्वैत एकेडेमी

दो शब्द

आज से लगभग दो वर्ष पूर्व रथयात्रोत्सव (आषाढ़ शु० २ सं० २०००) के शुभ दिन शुद्धाद्वैत सम्प्रदाय के तृतीय पीठाधिपति, काँकरोली-नरेश विद्याविलासि गो० व्रजभूषण-लालजी महाराज के सभापतित्व में कुछ साम्प्रदायिक साहित्य प्रचार के प्रेमी तत्वज्ञों की एक बैठक हुई, और उन्होंने श्री-वल्लभाचार्य के पुष्टिमार्ग सिद्धान्त-प्रचार, साहित्य-संरक्षण, प्रकाशन एवं उसको व्यापक रूप देने के लिये एक संस्था की स्थापना की, जिसका नाम "शुद्धाद्वैत एकेडमी" है।

उक्त संस्था के उद्देश्य, कार्य-प्रणाली एवं मन्तव्यों के फलस्वरूप उसे जो स्थायित्व, प्रामाणिकता एवं साहाय्य प्राप्त हुआ है वह संस्थाओं की संस्थापना के इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। अतएव उक्त संस्था अपने जिस मूलाधार की पुष्टि के लिये स्थापित हुई है, उसके पूर्व पृष्ठ पर कुछ प्रकाश यहाँ डालना आवश्यक प्रतीत होता है निम्न लिखित वक्तव्य मेरे सं० १९९८ में सूरत में सम्पन्न श्रीगोकुले-शजयन्ती सप्ताह के हिन्दी साहित्यिक समारोह के सम्बन्ध में प्रकाशित भाषण का आवश्यक अंश है।

"किसी देश के अभ्युत्थान में जहां उसकी संस्कृति का विशेष स्थान होता है वहां उसकी भाषा को भी छोड़ा नहीं जा सकता। उसके उत्थान में भाषा एक महान साधन होती चली आई है। लोक जागृति उस देश की भाषा के द्वारा ही तो हो सकती है और जन समुदाय के जागृत हुवे बिना देश का संगठन एवं अभ्युत्थान भी असम्भव है, तब कहना पड़ेगा कि देश के लिये उसकी भाषा को जीवित रखना उतना ही आव-

श्यक और अनिवार्य है, जितना उसकी संस्कृति की रक्षा करना। इस पवित्र भारत भूमि के लिये सुर-भारती की सुपुत्री हिन्दी या व्रजभाषा के अतिरिक्त और कौन सी भाषा राष्ट्रभाषा बन सकती है, या बनाई जा सकती है? आज हिन्दी, भारत राष्ट्र की व्यापक भाषा हो कर राष्ट्रभाषा बन गई है। उसके वे दिन फिर गये हैं जब उसे पराये रूप में देखा जाता था और परायी भाषाएं स्वकीयता के आवरण में सजाकर हमारे सामने खड़ी की जाती थीं। आज के समय में हम, हमारा देश, हमारी संस्कृति और हमारी भाषा में किसी प्रकार का द्वैविध्य नहीं रह गया है, जो एक शुभ लक्षण है।

भाषा का प्राण उसका साहित्य है, साहित्य के बिना कोई भी भाषा न तो पनप सकती है और न लोक-प्रिय हो सकती है। उसके लिये जीवित रहने के लिये जन्मघुटी की भांति साहित्य की पर्याप्त मात्रा अवश्य होनी चाहिये। हमारी हिन्दी के लिये भी साहित्य की जरूरत है। यदि उसके पास उसका स्वकीय कुछ साहित्य न होता तो क्या उसके लिये इस प्रकार उच्च आशा की जा सकती थी?

इस विषय की गवेषणा में चतुर्दिक परिभ्रमण कर लेने के बाद हमारी धारणा 'व्रजभारती' के साहित्य की ओर ही जाती है, जो आज की खड़ी बोली कहलाने वाली हिन्दी भाषा के कई सौ वर्ष पूर्व ही से साहित्य में अपना आसन जमा चुकी है। यद्यपि कहने वाले इसे सुर-भारती संस्कृत की देन-कह कर उसके अनुवाद रूप में इसे लांछित करने का साहस कर सकते हैं, पर वे ऐसा कहते समय यह सर्वथा भूल जाते हैं कि-इन दोनों में माता और पुत्री का वात्सल्यमय सम्बन्ध विद्यमान है। पुत्री यदि अपनी माता के अलंकारों से विभूपित होती है और यदि माता उसे अपने आभूषणों से स्वय अलं-

कृत करती है तो यह कोई उपहास अथवा लज्जा की बात नहीं है, वह तो इसकी अधिकारिणी ही है। अतः हमारी ब्रज-भारती के लिये संस्कृत की देन अथवा उसका अनुवाद भूषण रूप सिद्ध होता है न कि दूषण रूप।

हाँ, तो अन्ततोगत्वा हिन्दी-साहित्य का सारा बोझ ब्रजभाषा साहित्य पर आकर टिक जाता है, यदि हम थोड़ी देर के लिये दोनों को अलग २ समझ लेते हैं तो दोनों का न तो वह गौरव ही रहता है और न वह सुषुमा ही। अत साहित्य की दृष्टि से हमें दोनों में अभेद मानना अनिवार्य हो जाता है।

आज ब्रजभाषा साहित्य का जो प्रोज्ज्वल स्वरूप है, वह किसी विद्वान से छिपा नहीं है। उसका परिचय देना छोटे मुंह बड़ी बात होगी, उसका पर्याप्त विवेचन हो चुका है। मुझे तो केवल इस साहित्य के विषय में अपने दृष्टिकोण से यही कहना है कि यदि ब्रजभारती के साहित्य से उसके अधि-नायक भगवान् श्रीकृष्ण को अलग कर लिया जाता है तो वह सर्वथा सारहीन और निरर्थक मृतकलेवरवत् हो जाता है। समस्त कलाओं के आदि निधान, आनन्द के मूर्त स्वरूप, शृङ्गार के आदि देव, भगवान कृष्ण की चरितावली के गाने के कारण ही तो वह आज चिरस्थायी हो गया है। अब उसमें अनन्त काल तक किसी प्रकार के विकार के आने की सम्भा-वना नहीं है। वह सर्वदा नवीन और सुन्दर, मनोहर तथा लोक-कल्याणकारी बना रह सकता है।

इसी प्रकार की मूल भावना को लेकर ब्रजभारती के आदि कवियों ने अपनी काव्य-मयी साधना के पुष्प आराध्य देव भगवान् श्रीकृष्ण के चरण कमलों में चढ़ाये हैं। लौकिक

काव्य रस को अलौकिक आनन्दामृत में परिणत कर उन्हों ने स्वयं भी अमरता प्राप्त की है, और दूसरों के लिये भी सुलभ साधन समुपस्थित कर दिया है।

इस प्रकार हमारा साहित्य, हमारे आराध्य देव और हमारा सम्प्रदाय तीनों एक रूप हो जाते हैं, और इस संमिश्रित रूप की अभिव्यक्ति उन साहित्यकारों के द्वारा होती है जो उसके आधार स्तम्भ और प्रकाश दीप समझे जाते हैं। इस प्रकार शुद्धाद्वैत सम्प्रदाय ने हिन्दी के लिये बहुत कुछ कार्य किया है, यह कहते हमें कोई सङ्कोच नहीं होता।

शुद्धाद्वैत सम्प्रदाय में हिन्दी-साहित्य को जो स्थान प्राप्त और उसे उसने जो प्रारम्भ से प्रश्रय दिया है, उसकी प्रशंसा हिन्दी-साहित्य के कई इतिहास लेखकों ने यथास्थान की है, पर दुःख इस बात का है कि-अभी तक उसके द्वारा वास्तविक रूप में उस साहित्य का प्रकाशन नहीं किया गया जो-उसकी अमूल्य निधि होने के साथ राष्ट्र-भाषा हिन्दी के लिये एक अमर देन है। आज जो भी हिन्दी के उज्ज्वल रत्न अष्टछाप आदि की कृति प्रकाश में आई है, वह या तो गुर्जर भाषा भाषियों के द्वारा जो उसके मौलिक रूप से सर्वथा अनभिज्ञ हैं अथवा उन साहित्यिक व्यक्तियों के द्वारा जो साम्प्रदायिक भावनाओं से शुष्क नहीं तो उदासीन अवश्य हैं, और जो सिद्धांतों के मौलिक भेद से अपरिचित होने के कारण आज भी "शुद्धाद्वैत' को 'विशुद्धाद्वैत' कह बैठते हैं। ऐसी अवस्था में उस साहित्य माधुरी से हमें वञ्चित रह जाना पड़ता है जो साहित्य संसार की जीवन बूटी है, और जिस में लौकिक चरित्र के रूप में आध्यात्मिकता का रसास्वादन होता है।

साहित्य का कोई भी प्राचीन ग्रन्थ किस आन्तरिक भावना, कल्पना किंवा परिस्थितियों का प्रतिफल है, यह तब तक ध्यान पथ में नहीं आ सकता, जबतक कि उस रसमें स्वयं भीजने की चेष्टा न की जाय ? ऊपर ही ऊपर से किसी भावना का काल्पनिक प्रतिरेखा चित्र खींचने को भले ही आज की साहित्यिक धांधली में सफलता मान ली जाय, अन्तस्तल में प्रविष्ट होकर वहां से अमूल्य रत्न निकाल कर जनता के पारखियों के आगे रखना दूसरी बात है । इस ओर किसी भी तरफ से चेष्टा नहीं की गई । जहाँ साम्प्रदायिक लेखक अपने सत्य इतिहास के संकलनार्थ प्रवृत्त ही नहीं हुए वहाँ प्रकाशन की बात तो कोसों दूर रही । ऐसी अवस्था में वही हुआ जो होना चाहिये अथवा होता आया है ।

विद्वान और तत्वज्ञ पुरुष करांगुलियों पर परिगणनीय हैं । उनके सम्मुख किसी भी सिद्धांत की अच्छाई या बुराई प्रकट होकर अपना उतना प्रभाव नहीं जमाती जितनी जन-साधारण की भ्रांत धारणा । इसके उत्तर-दाता वे लेखक हैं जो किसी गवेषणा के बिना ही साहित्य जैसे दुरूह कार्य का सम्पादन कर डालते हैं । आज साहित्यिक जगत सिद्धांतों की सुचारुता पर जितना ध्यान नहीं देता उतना ऊपरी उपकरण पर । बाह्य और आन्तर दोनों रूप जिस वस्तु के रमणीय हैं उसकी ओर जन समाज का आकर्षण होना सहज है । पर जो बाह्य रूप से सर्वथा ही कुचैल है और आन्तर अवस्था में मनोरम है तो उसकी ओर आकृष्ट होना उन्हीं के लिये सम्भव है जो गम्भीरता के उपासक हैं । ऐसा कार्य जहां तक ध्यान है सर्व साधारण की उपादेय वस्तु नहीं बन सकती । अतः इसकी नितान्त आवश्यकता है कि किसी भी वस्तु को जो आंतर में मौलिक एवं संभ्रान्त है ऊपर से भी परिमार्जित स्थिति में रखना चाहिये ।

हमारे इतिहास के प्रति इस भ्रमात्मक प्रचार अथवा प्रकाशन ने अभीतक उन गवेषणाओं को पूर्ण नहीं होने दिया है, जो आज से कितने ही दिन पूर्व हो जानी चाहिये थीं। हिन्दी साहित्य की खोज का जो इतिहास निकला है, या आज निकल रहा है, वह सन्दिग्ध और ऊपरी खोज का है। वास्तव में उसका अधिकांश इतिहास धार्मिक सम्प्रदायों के इतिहास के साथ छिपा हुआ है। कितने ही कवियों और विद्वानों का परिचय तबतक पूरा नहीं किया जा सकता जबतक धार्मिक सम्प्रदायों के संचालक, तिलकायितों के जीवनचरित्र के संकलन और गवेषणा न कर ली जाय। हिन्दी साहित्य का एक बड़ा भाग अभी अन्वेषण संशोधन और प्रकाशन की बाट जोह रहा है।

भक्तिमार्गीय सम्प्रदायोंमें श्रीवल्लभाचार्य के द्वारा संस्थापित पुष्टिमार्ग अपना एक विशेष स्थान रखता है। श्रीवल्लभाचार्य का प्रादुर्भाव सं० १५३५ में हुआ और आपने अपने सं० १५८७ तक के जीवन काल में भक्तिमार्ग की विमल धारा बहा कर अनेक पतित जीवों के कल्मषों का प्रक्षालन किया, यह इतिहास से तिरोहित नहीं है।

श्रीवल्लभाचार्य के प्राकट्य काल के आस पास का समय भारतीय साहित्य के लिये एक अनुपम अवसर था। इस समय भी भक्ति में जिस प्रकार की पूर्णता उसकी देशकाल परिस्थिति की अनुकूलता के कारण आई, उसी प्रकार उस समय ब्रजभाषा साहित्य को भी यही सौभाग्य प्राप्त हुआ। हमें यह कहते हुए एक प्रकार के आत्म-गौरव का भान होना चाहिये कि इसका सारा श्रेय आज हिन्दी साहित्य के विद्वान, आचार्य

और नियामक हमारे आराध्य श्रीवल्लभाचार्य और उनके द्वितीय आत्मज किन्तु अद्वितीय विद्वान् श्रीविट्ठलेश प्रभुचरण की सेवा में समर्पित करते हैं। आज कहा जाता है कि अष्टछाप की स्थापना यदि उस समय न की गई होती तो हिन्दी को राष्ट्रभाषा के प्रतिष्ठित सिंहासन पर बैठने की योग्यता प्राप्त होती या नहीं इसमें पूरा ही सन्देह था। यह उस अमर अष्टछाप के साहित्य ही की देन है जो तत्कालीन राजभाषा और राष्ट्रभाषा उर्दू एवं फारसी आज उस आसन के लिये सर्वथा अनधिकारिणी निश्चित कर दी गई है। अन्यथा हम आज अपनी वात्सल्यमयी माता का पोषक स्तन्यपान न करते हुए विजातीय फारसी विमाता के द्वारा न जाने किसका दूध पीकर पलते-पोसते हुए दृष्टिगोचर होते, और तब क्या हम अपनी जातीयता, अपनी संस्कृति, अपने धर्म, अपने देश और भाषा के प्रचार के लिये इस प्रकार उद्ग्रीव हो सकते थे ?

श्रीवल्लभाचार्य, उनके आत्मज औरतत्प्रचारित पुष्टि-मार्ग सम्प्रदाय के द्वारा जहां देश में हिन्दी का प्रत्यक्ष प्रचार हुआ है, वहां उनके द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से उसके प्रचार, उन्नति एवं स्थायित्व में बल भी मिला है, यह हिन्दी साहित्य से छिपा नहीं है।

अब इस विदित-वेदितव्य के समय में यह सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं है कि पुष्टिमार्ग शब्द में प्रयुक्त 'पुष्टि' शब्द का क्या अर्थ है ? साहित्य जगत् में एक जमाना यह भी आया था जब पुष्टिमार्ग का अर्थ खाने, पीने, मौज उड़ाने के मार्ग से लिया जाता था, और अपने इस अज्ञान का सारा बोझ इसके प्रवर्तक आचार्य चरणों पर डाल दिया जाता था। हमारे हिन्दी-साहित्य में ऐसे कई विद्वान् लेखक हुए हैं

जिन्होंने अपनी इस भूल को सुधारा ही नहीं, उलटे उसे परिपुष्ट किया है और वे अपनी-अपनी हाँकते गये हैं।

पर साहित्य-जगत् सत्य का पक्षपाती न हो, ऐसा भी नहीं कहा जासकता। धीर, गम्भीर, विद्वान् और सत्य के पक्षपाती सज्जन हठाग्रह को दूर कर उसे सत्य रूप में मानने से हिचकिचाते भी नहीं है। वे विना संकोच के अपना मत परिवर्तन कर देते हैं, यही धारणा आज हमारे सम्प्रदाय के साथ भी प्रचलित हो गई है। आज साहित्य के सद्भाग्य से उसे ऐसे सुपुत्र भी मिल जाते हैं जो वास्तविकता के हामी हैं।

आज हिन्दी साहित्य के कर्णधार उसके भंडार को भरपूर करने के लिये हमारे सम्प्रदाय की ओर आने लगे हैं और उसकी सूक्ष्म से सूक्ष्म वस्तु और विचार का परिश्रम पूर्वक अध्ययन करने लगे हैं। आज का जो भी समालोचक अथवा लेखक-समाज है, वह अष्टछाप की ओर वरवस झुकता चला आ रहा है, और वह दिन दूर नहीं जब उसका समस्त साहित्य प्रकाशित होकर अपने समुज्ज्वल तेज के साथ सम्प्रदाय के गौरव की वृद्धि करेगा।"

यह कहना यद्यपि आत्मीय प्रख्याति होगी पर यह नितान्त सत्य है कि–हिन्दी साहित्य मे जगद्गुरु श्रीवल्लभाचार्य के सम्प्रदाय में दीक्षित वैष्णवों ने जिस सिंहासन पर अधिष्ठान पाया है वह अपनी उपमा आप है। जिस अष्टछाप के कवियों के विशाल, सरस एवं शाश्वत आत्मानंद को प्रदान करने वाले साहित्य को लेकर हिन्दी साहित्य अपना मस्तक ऊंचा कर रहा है यह इस सम्प्रदाय की ही तो देन है। 'अष्टछाप' और उसके अनन्तर अपनी अमर कृतियों से हिन्दी

साहित्य के भंडार को भरने वाले कवियों की एक लम्बी सूची है और उनके रचित ग्रन्थों का एक विशाल संग्रह । जिसमें से अधिकांश अभी भी साहित्य जगत को दृष्टि गोचर नहीं हुआ है ।

उक्त संस्था 'शुद्धाद्वैत एकेडमी' ने -- के सम्बन्ध में यहां कुछ कहना अस्थाने होगा और जो उसकी शीघ्र प्रकाशित होने वाली द्वैवार्षिक कार्य-विवरण (रिपोर्ट) से अवगत हो ही जायगा -- हिन्दी साहित्य की इसी पिपासा, जिज्ञासा, एवं सुश्रूषा की पूर्ति के लिये जिस साधन का अवलम्बन लिया है- वह है अष्टछापस्मारक संस्थापना । उक्त स्मारक के आयोजन में जहां अष्टछाप के कवियों के अजर अमर मूर्तस्वरूप का परिदर्शन होगा, वहां शुद्धाद्वैत संप्रदाय के विद्वान आचार्यों, रससिद्ध कवियों, तत्वज्ञ पण्डितों, सुमधुर गायक कीर्तनकारों एवं अन्य साहित्य रचयिताओं का भी परिचय प्राप्त होगा। साम्प्रदायिक साहित्य-संगीत एवं कला की इस त्रिपथगा का पुण्य प्रवाह हिंदी साहित्यिक जगत में विमल स्वरूप में प्रवाहित करने के लिये जिस तप, त्याग, साहाय्य की आवश्यकता होगी, वह प्राप्त किया जायगा और स्वयं 'शुद्धाद्वैत एकेडमी' अपना सर्वविध सहयोग प्रदान करेगी और उसकी पूर्ति ही उसका उच्च उद्देश्य, मञ्जुल कर्तव्य एवं कमनीय आदर्श होगा ।

प्रस्तुत विचारों की परिपाटी में संस्था ने जहां 'स्मारक संस्थापना' का अभिनव आयोजन प्रारंभ कर दिया है वहां उसके साथ ही साहित्यिक साहित्य के प्रकाशन का श्रीगणेश भी। "शुद्धाद्वैत एकेडमी" ने अपनी स्थापना के समकाल ही 'अष्टछाप-साहित्य' को प्रकाशित करने का प्रस्ताव स्वीकृत किया है फलस्वरूप यह निश्चय कि महाकवि सूरदास जी सूर-

जिन्होंने अपनी इस भूल को सुधारा ही नहीं, उलटे उसे परिपुष्ट किया है और वे अपनी-अपनी हाँकते गये हैं।

पर साहित्य-जगत् सत्य का पक्षपाती न हो, ऐसा भी नहीं कहा जासकता। धीर, गम्भीर, विद्वान् और सत्य के पक्षपाती सज्जन हठाग्रह को दूर कर उसे सत्य रूप में मानने से हिचकिचाते भी नहीं हैं। वे बिना संकोच के अपना मत परिवर्तन कर देते हैं, यही धारणा आज हमारे सम्प्रदाय के साथ भी प्रचलित हो गई है। आज साहित्य के सद्भाग्य से उसे ऐसे सुपुत्र भी मिल जाते हैं जो वास्तविकता के हामी हैं।

आज हिन्दी साहित्य के कर्णधार उसके भंडार को भरपूर करने के लिये हमारे सम्प्रदाय की ओर आने लगे हैं और उसकी सूक्ष्म से सूक्ष्म वस्तु और विचार का परिश्रम पूर्वक अध्ययन करने लगे हैं। आज का जो भी समालोचक अथवा लेखक-समाज है, वह अष्टछाप की ओर बरबस झुकता चला आ रहा है, और वह दिन दूर नहीं जब उसका समस्त साहित्य प्रकाशित होकर अपने समुज्ज्वल तेज के साथ सम्प्रदाय के गौरव की वृद्धि करेगा।"

यह कहना यद्यपि आत्मीय प्रख्याति होगी पर यह नितान्त सत्य है कि–हिन्दी साहित्य में जगद्गुरु श्रीवल्लभाचार्य के सम्प्रदाय में दीक्षित वैष्णवों ने जिस सिंहासन पर अधिष्ठान पाया है वह अपनी उपमा आप हैं। जिस अष्टछाप के कवियों के विशाल, सरस एवं शाश्वत आत्मानंद को प्रदान करने वाले साहित्य को लेकर हिन्दी साहित्य अपना मस्तक ऊंचा कर रहा है वह इस सम्प्रदाय की ही तो देन है। 'अष्टछाप' और उसके अनन्तर अपनी अमर कृतियों से हिन्दी

साहित्य के भंडार को भरदेने वाले कवियों की एक लम्बी सूची है- और उनके रचित ग्रन्थों का एक विशाल संग्रह । जिसमें से अधिकांश अभी भी साहित्य जगत को दृष्टि गोचर नहीं हुआ है ।

उक्त संस्था 'शुद्धाद्वैत एकेडमी' ने -- के सम्बन्ध में यहाँ कुछ कहना अस्थाने होगा और जो उसकी शीघ्र प्रकाशित होने वाली द्विवार्षिक कार्य-विवरण (रिपोर्ट) से अवगत हो ही जायगा -- हिन्दी साहित्य की इसी पिपासा, जिज्ञासा, एवं शुश्रूषा की पूर्ति के लिये जिस साधन का अवलम्बन लिया है- वह है अष्टछापस्मारक संस्थापना । उक्त सस्मारक के आयोजन में जहाँ अष्टछाप के कवियों के अजर अमर मूर्तस्वरूप का परिदर्शन होगा, वहाँ शुद्धाद्वैत सम्प्रदाय के विद्वान आचार्यों, रससिद्ध कवियों, तत्वज्ञ पण्डितों, सुमधुर गायक कीर्तनकारों एवं अन्य साहित्य रचयिताओं का भी परिचय प्राप्त होगा। साम्प्रदायिक साहित्य-संगीत एवं कला की इस त्रिपथगा का पुण्य प्रवाह हिन्दी साहित्यिक जगत में विमल स्वरूप में प्रवाहित करने के लिये जिस तप, त्याग साहाय्य की आवश्यकता होगी, वह प्राप्त किया जायगा और स्वयं 'शुद्धाद्वैत एकेडमी' अपना सर्वविध सहयोग प्रदान करेगी और उसकी पूर्ति ही उसका उच्च उद्देश्य, मन्जुल कर्तव्य एवं कमनीय आदर्श होगा ।

प्रस्तुत विचारों की परिपाटी में संस्था ने जहाँ 'स्मारक संस्थापना' का अभिमत आयोजन प्रारम्भ कर दिया है वहाँ उसके साथ ही तद्विषयक साहित्य के प्रकाशन का श्रीगणेश भी। "शुद्धाद्वैत एकेडमी" ने अपनी स्थापना के समकाल ही 'अष्टछाप-साहित्य' को प्रकाशित करने का प्रस्ताव स्वीकृत किया है फलस्वरूप यह निश्चय कर कि महाकवि सूरदास का सूर-

जिन्होंने अपनी इस भूल को सुधारा ही नहीं, उलटे उसे परिपुष्ट किया है और वे अपनी-अपनी हाँकते गये हैं।

पर साहित्य-जगत् सत्य का पक्षपाती न हो, ऐसा भी नहीं कहा जासकता। धीर, गम्भीर, विद्वान् और सत्य के पक्षपाती सज्जन हठाग्रह को दूर कर उसे सत्य रूप में मानने से हिचकिचाते भी नहीं हैं। वे बिना संकोच के अपना मत परिवर्तन कर देते हैं, यही धारणा आज हमारे सम्प्रदाय के साथ भी प्रचलित हो गई है। आज साहित्य के सद्भाग्य से उसे ऐसे सुपुत्र भी मिल जाते हैं जो वास्तविकता के हामी हैं।

आज हिन्दी साहित्य के कर्णधार उसके भंडार को भरपूर करने के लिये हमारे सम्प्रदाय की ओर आने लगे हैं और उसकी सूक्ष्म से सूक्ष्म वस्तु और विचार का परिश्रम पूर्वक अध्ययन करने लगे हैं। आज का जो भी समालोचक अथवा लेखक-समाज है, वह अष्टछाप की ओर वरबस झुकता चला आ रहा है, और वह दिन दूर नहीं जब उसका समस्त साहित्य प्रकाशित होकर अपने समुज्ज्वल तेज के साथ सम्प्रदाय के गौरव की वृद्धि करेगा।"

यह कहना यद्यपि आत्मीय प्रख्याति होगी पर यह नितान्त सत्य है कि—हिन्दी साहित्य में जगद्गुरु श्रीवल्लभाचार्य के सम्प्रदाय में दीक्षित वैष्णवों ने जिस सिंहासन पर अधिष्ठान पाया है वह अपनी उपमा आप हैं। जिस अष्टछाप के कवियों के विशाल, सरस एवं शाश्वत आत्मानंद को प्रदान करने वाले साहित्य को लेकर हिन्दी साहित्य अपना मस्तक ऊंचा-कर-रहा है वह इस सम्प्रदाय की ही तो दैन है। 'अष्टछाप' और उसके अनन्तर अपनी अमर कृतियों से हिन्दी

साहित्य के भंडार को भरनेवाले कवियों की एक लम्बी सूची है और उनके रचित ग्रन्थों का एक विशाल संग्रह । जिसमें से अधिकांश अभी भी साहित्य जगत को दृष्टि गोचर नहीं हुआ है ।

उक्त संस्था 'शुद्धाद्वैत एकेडमी' ने -- के सम्बन्ध में यहां कुछ कहना अस्थाने होगा और जो उसकी शीघ्र प्रकाशित होने वाली द्वैवार्षिक कार्य-विवरण (रिपोर्ट) से अवगत हो ही जायगा -- हिन्दी साहित्य की इसी पिपासा, जिज्ञासा, एवं सुश्रूषा की पूर्ति के लिये जिस साधन का अवलम्बन लिया है- वह है अष्टछापस्मारक संस्थापना । उक्त रास्मारक के आयोजन में जहाँ अष्टछाप के कवियों के अजर अमर मूर्तस्वरूप का परिदर्शन होगा, वहाँ शुद्धाद्वैत संप्रदाय के विद्वान आचार्यों, रससिद्ध कवियों, तत्वज्ञ पण्डितों, सुमधुर गायक कीर्तनकारों एवं अन्य साहित्य रचयिताओं का भी परिचय प्राप्त होगा। साम्प्रदायिक साहित्य-संगीत एवं कला की रसनिष्यगा का पुण्य प्रवाह हिंदी साहित्यिक जगत में विमल स्वरूप में प्रवाहित करने के लिये जिस तप, त्याग, साहाय्य की आवश्यकता होगी, वह प्राप्त किया जायगा और स्वयं 'शुद्धाद्वैत एकेडमी' अपना सर्वविध सहयोग प्रदान करेगी और उसकी पूर्ति ही उसका उच्च उद्देश्य, सन्तुक कर्तव्य एवं कमनीय आदर्श होगा ।

प्रस्तुत विचारों की परिपाटी में संस्था ने जहां 'स्मारक संस्थापना' का अभिमत आयोजन प्रारंभ कर दिया है वहां उसके साथ ही तद्विषयक साहित्य के प्रकाशन का श्रीगणेश भी। "शुद्धाद्वैत एकेडमी" ने अपनी स्थापना के समकाल ही 'अष्टछाप-साहित्य' को प्रकाशित करने का प्रस्ताव स्वीकृत किया है फलस्वरूप यह निश्चय कर कि महाकवि सूरदास का सूर-

सागर दो तीन स्थानों से सम्पादित कर प्रकाशित किया जाने वाला है, परमानन्द दास कृत 'परमानन्द सागर' के सुन्दर संस्करण निकालने की ओर अपना ध्यान आकृष्ट किया। तत्वज्ञ विद्वानों का एक सम्पादक मण्डल बनाया गया, 'परमानन्द सागर' की प्रतिलिपि की गई और यत्रतत्र बिखरे हुए उनके अन्य पदों का संकलन किया गया। पदों की अकाराद्यनुक्रमणिका बनाये जाने और परस्पर पदों का मिलान करने पर विदित हुआ कि महाकवि परमानन्द दास के रचित पदों की संख्या लगभग २००० है।

लगभग १ वर्ष के सतत परिश्रम से कीर्तन-साहित्य के विशेष मर्मज्ञ, सम्प्रदाय के तृतीय पीठके अधीश्वर कांकरोली नरेश गोस्वामी श्रीव्रजभूषण लालजी के तत्वावधान में उसका सुन्दर सम्पादन किया गया है सम्पादन की समाप्ति पर सम्पादक-मण्डल को जहाँ हर्ष हुआ, वहाँ वर्तमानकालीन युद्धजन्य परिस्थिति वश प्रेसों की अव्यवस्था-कागजों की महर्घता के साथ दुष्प्राप्यता से उस पुण्यकार्य के प्रकाशन-विलम्ब से दुःख भी हुआ। अस्तु "भगवान् पर किसका जोर" वाली कहावत के अनुसार अनुकूल समय की प्रतीक्षा में उस कार्य को वहीं स्थगित कर देना पड़ा है।

उक्त्त्यु॰ एकेडमी ने अपने सदस्यों को एक मासिक पत्र विनामूल्य
वर्ष एक ग्रन्थ सुविधानुसार मूल्य में देने का एक
किया था, जिसके फल स्वरूप सम्प्रति
एक पत्र सदस्यों की सेवा में प्रेषित
में गत वर्ष सं० २००१ में हरि-
श्रीमहाप्रभुजी की प्राकट्य
पद्यमयी 'आचार्य

वंशावली' भी सम्मिलित है, विशेष नियमानुसार विना मूल्य वितरण की गई है ।

सं० २००२ के ग्रन्थ वितरण के सम्बन्ध में यह विचार किया गया कि—कोई अप्रकाशित सुन्दर ग्रन्थ प्रकाशित किया जाय । फलनः सरस्वती भंडार कांकरोली के संग्रह से "जगतानन्द" की प्रस्तुत यावदुपलब्ध रचनाएँ प्रकाशित की जा रही हैं जो साहित्य-रसिकों के करकमल में शोभित हो रही है ।

यद्यपि 'परमानन्द-सागर' के समान इसके मुद्रण, प्रकाशन में भी अनेक असुविधाए आकर खडी हुई फिर भी द्वारकेशप्रभु की कृपा तथा श्री विट्ठलनाथ प्रेस कोटा के व्यवस्थापक मित्रवर शास्त्री लक्ष्मणजी सांचीहर के सौजन्य से यह सुअवसर प्राप्त हुआ और हम "शुद्धाद्वैत एकेडमी के स्वतन्त्र ग्रन्थ प्रकाशन के रूप में प्रस्तुत ग्रन्थ को उपस्थापित कर सके । द्वारिकादासजी पारेख के भी हम विशेष कृतज्ञ है, जिन्होंने पुस्तक के प्रकाशन में कई प्रकार से सहाय्य किया है ।

प्रस्तुत ग्रन्थ के सम्पादन, संशोधन तथा मुद्रण एवं प्रकाशन में कई त्रुटियाँ रह गई हैं फिर भी साहित्य जगत के सम्मुख हम जिस तथाकथित नवीन उपहार को लेकर उपस्थित हुए हैं वह एक सेवा का सौभाग्य फल है। प्रस्तुत ग्रन्थ-प्रकाशन उक्त 'अष्टछाप-स्मारक' सम्बन्धी उस दिशा की ओर प्रगति, है जिसे क्रमशः स्मरणीय एवं कमनीय रूप प्रदान किया जायगा ।

सम्प्रति शु॰ एकेडमी के मन्तव्यानुसार निम्नलिखित आयोजन कार्यरूप में परिणत किये जा रहे हैः-

१. परमानन्द सागर का अवशिष्ट संपादन तथा तत्सम्बन्धी मौलिक गवेषणामय निबन्धों का लेखन ।

२ अष्टछाप के कवियों, सम्प्रदाय के विशिष्ट आचार्यों विद्वानों तथा कीर्तनकारों के पृथक् २ स्मारकों की संस्थापना।

३. शुद्धाद्वैत साम्प्रदायिक केन्द्रीय विशाल पुस्तकालय की स्थापना।

४ कीर्तन (पद) रचयिताओं के यावत्प्राप्य अलग २ पदों की अकारानुक्रमणिका।

५. अप्रकाशित साहित्य का प्रकाशन आदि
शुद्धाद्वैत एकेडमी समय, सुविधा, एवं सहयोग की सुरसरिता के सम्मिलित प्रवाह से साहित्य संसार को सिंचित करती हुई स्वकीय सेवा समर्पण का सौभाग्य समधिगन करती रहे, इस सदाशा के साथ हम अवसरोचित अवकाश ग्रहण करते हैं।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

—:[]:◯◯:[]:—

काकरोली-
ज्येष्ठाभिषेकोत्सव
स २००२
ता० २४-६-१९४५ रवि

विनयग्राही—
पो. कण्ठमणि शास्त्री विशारद
मंत्री
"शुद्धाद्वैत एकेडमी"
तथा
संचालक विद्या विभाग

कवि 'जगतानन्द' का परिचय

नामः—

कवि श्री 'जगतानन्द' उपनाम 'जगतनन्द' और 'जगनन्द' का संक्षिप्त परिचय 'मिश्रबन्धु वि०' द्वि० भाग में इस रूप में उपलब्ध होता है:—

(१) "नाम (३०५) जगनन्द, वृन्दावन-वासी, जन्म सं. १६५८, रचना काल १६८५, विवरण- इनके कवित्त हजारा मेंहै।

निम्न श्रेणी"

(२) "नाम (४७४) जगतानन्द
१

ग्रन्थ- (१) व्रज-परिक्रमा, (२) भागवत(च० त्रै० रि०)

रचना काल- सं १७३१"

'मिश्र व० वि०' के आधार पर दोनों एक दूसरे से भिन्न कवि है। जिसमें आपाततः प्रस्तुत संग्रह सं० २ के कवि की स्पष्टतः रचना विदित हो जाती है।

'श्रीवल्लभ-वंशावली तथा अन्य सभी ग्रन्थों में कवि ने जहाँ कई स्थानों पर 'जगनन्द' 'नन्द' और 'जगतनन्द' इन नामों से अपना उल्लेख किया है, वहाँ ग्रन्थ की अन्तिम पुष्पिका में उसका नाम 'जगतानन्द' भी मिलता है—

अतः यह मानना पड़ेगा कि—पद्य में समाविष्ट करने के लिये कवि अपने यथायोग्य समानार्थक नाम का प्रयोग करता था, और इसी कारण उसके 'जगतनन्द' 'जगनन्द' एवं 'नन्द' यह उपनाम प्रचलित थे। यद्यपि 'मि० व० विनोद' में 'जगनन्द' नाम का एक कवि अलग ही लिखा है, जो संभवतः'जगतानन्द' के अतिरिक्त भी हो सकता है। जिसका समय-विभेद के कारण हमारे चरित्र नायक से कोई सम्पर्क नहीं है, फिर भी 'जगतानन्द' कवि अपने इन सभी उपनामों के कारण इन सभी रचनाओं का एक ही कर्ता था, यह भी सिद्ध हो जाता है।*

जन्म समय- मि० व० विनोदकार ने 'जगतानन्द' का रचना काल सं० १७३१ दिया है- जिसका उसमें कोई आधार नहीं दिया गया है।

कवि रचित 'श्रीवल्लभ-वंशावली' की रचना सं० १७८१ में समाप्त हुई + यही एक ऐसा ग्रन्थ है जिसमें कविने अपने समय का उल्लेख किया है। और जिसे लक्ष्य में लेकर हमें उसके समय का निर्णय करना है।

'वल्लभ वंशावली' के मंगलाचरण में कविने "श्रीगोवर्धनेशजी" को अपने गुरु - रूप में स्मरण किया है। जिसकी पुष्टि "श्री गुसांईजी की वनयात्रा" (ग्रन्थांक २ दोहा सं० १) से भी होती है। यह गोवर्द्धनेशजी गोस्वामी श्रीविट्ठलनाथजी

---

* इसकी पुष्टि के लिये देखो "व्रज ग्राम-वर्णन (ग्रन्थांक ४) का दोहा १।

+ देखो ग्रन्थांक १ दोहा सं० १८४ (पत्र २३)

के चतुर्थ पुत्र श्रीगोकुलनाथजी के पौत्र, और उनके कनिष्ठ पुत्र श्रीविट्ठलरायजी के आत्मज थे * वल्लभ-वंशावली में उक्त श्रीगोवर्द्धनेशजी का जन्म, संवत् १६७३ दिया हुआ है। इनका अन्तिम समय अधिक से अधिक १७१०-१५ तक माना जा सकता है। इस अन्तिम समय के निर्णय के पक्ष में सम्प्रदाय में एक कथानक उपलब्ध होता है जो इस प्रकार है:—

जिस समय गिरिराजजी (जतीपुरा) में सम्प्रदाय की सातों निधियाँ विराजमान थीं उस समय श्रीगुसांईजी श्रीविट्ठलनाथजी (सं. १५७२-१६४२) के चतुर्थ पुत्र श्रीगोकुलनाथजी (१६०८-६७) तथा सप्तमपुत्र श्रीघनश्यामजी जन्म (सं. १६२७) विद्यमान थे। श्रीघनश्यामजी ने अन्नकूट के अवसर पर अपने प्रभु श्रीमदनमोहन जी को सुखपाल में विराजमान कर श्रीनाथजी के पास पधराया। संयोगवश सुखपाल का अगला डंडा श्रीगोकुलनाथजी के मंदिर के कोने से जा टकराया। उस समय श्रीगोकुलनाथजी के पुत्र श्रीगोपालजी (जन्म सं० १६४३) ने अपने काका श्रीघनश्यामजी से कहलवाया कि-सुखपाल का डंडा कटवाकर छोटा करा दिया जावे, जिससे फिर आगे ऐसा प्रसंग न आवे। अपने भतीजे श्रीगोपाल जी के इस कथन पर घनश्यामजी को उनके औद्धत्य पर खेद हुआ और कहा कि-इनका स्वभाव अभी से ऐसा है तो आगे चलकर क्या होगा? घनश्यामजी के इस कथन पर गोपालजी ने भी उन्हे कुछ स्थायी हानि पहुंचाने का विचार किया और एक दिन रात्रि में मदनमोहनजी को चुराकर सिन्ध की एक ब्राह्मणी वैष्णव के पास पधरा कर उसे रात ही रात बाहर रवाना करा दिया जो बहुत दिनों से इनके पास

---

* देखो- वल्लभवंशावली दोहा- १३४, १३५

किसी निधि के सेवार्थ पधरा देने की प्रार्थना कर रही थी+ गोपालजी की इस समय १५ से २५ वर्ष की युवावस्था होनी चाहिये। अतः यह प्रसग सं० १६६३ के वाद का है । इसका स्पष्ट उल्लेख सं० कल्पद्रुम मे १६६६ दिया है जो ठीक है *

इस दुःखद प्रसंग पर घनश्यामजी को अतिशय कष्ट होते देख श्रीगोकुलनाथजी ने चोरी करने वाले को निर्वंश होने का शाप दिया। जिसमे उनके सेवक के निवेदन करने पर ऐसा करने वाले अपने वंशजो को भी सम्मिलित कर लिया था।

फलत. श्रीगोकुलनाथजी का वंश गोवर्धनेशजी के पुत्र व्रजपतिजी (ज० सं १६६३) और व्रजाधीशजी (ज० सं० १६६७) के वाद समाप्त होगया, और इसके वाद इस स्थान पर दत्तक रूप से पुत्र आए जिनका नामोल्लेख 'जगतानन्द' न नहीं किया है वल्लभाचार्य जीना वंशनो 'वंशावली' पर पूर्वापर विचार करते ☉

+ गिरधर लालजी १२० वचनामृत में से ११७।

*संप्रदाय कल्पद्रुम 'पत्र ६८ दोहा २०' १२० वचनामृत के आधार पर इस चोरी से मदनमोहनजी स० १७४६ में नाथद्वारा में प्राप्त हुए।

☉ व्रजपतिजी की वहूजी ने अपनी वृद्धावस्था में अपनी कुल परंपरागत निधि श्रीरघुनाथजी के किसी वंशज (?) की पत्नी–जो उनकी भतीजी फूल कुंवर वहूजी के नाम से प्रसिद्ध थी–को देदी। यह अपने पति की द्वितीय पत्नी थीं । इनसे पुत्र एक का जन्म तव हुआ जव व्रजपति जी की वहूजी विद्यमान नहीं थी अन्यथा वे फूलकुंवर वहूजी के पुत्रको अपना दत्तक पुत्र रूपेण स्वीकार कर लेतीं । (श्रीवल्लभाचार्यजी ना वशनी वशावली-पत्र……)

यह अनुमान होता है कि—गोवर्धनेशजी का समय अधिक से अधिक सं० १७१०, १५ तक माना जा सकता है। अतः इस आधार पर एवं 'जगतानन्द' की रचना काल (सं० १७८१) का सामञ्जस्य करते हुए यह मानना पड़ेगा कि "जगतानन्द" अपनी छोटी वय में ही गोवर्धनेशजी के शिष्य हुए । इस समय उनकी वय लगभग १० वर्ष की होगी। इस आधार पर 'जगतानन्द' का जन्मसमय सं० १७०० के लगभग अनुमानित किया जाना अप्रामाणिक न होगा।

शिष्यता—जगतानन्द ने "वल्लभ-वंशावली" में अन्य बालकों के जन्म संवत् न देकर केवल गोकुलनाथजी के वंशजों के ही जन्म संवत् दिये हैं अतः यह निर्विवाद है कि कवि इस चतुर्थ घर का ही सेवक पुष्टिमार्गीय वैष्णव शिष्य था।

इस प्रसंग में कविने—

श्री गोवर्द्धन ईश प्रभु हृदै रहो करि धाम ।
जिनके पद जुग कमल कों करि 'जगनन्द' प्रनाम *

इस दोहा द्वारा अपने गुरु को अभिवादन करते हुए उनका विशेष परिचय उपखाने सहित दशम कथा के प्रथम मंगलाचरण में इस प्रकार दिया है :- "सौ बातन की बात भजो श्री विट्ठलनाथै। गोकुलनाथ सुनाथ राय विट्ठल मम माथै। श्री गोवर्धन ईस गुरुन के चरन मनाऊं ! उपखानों के सहित "दशम की लीला गाऊँ"

इसमे श्रीगोकुलनाथजी के पौत्र और विट्ठलरायजी के पुत्र श्रीगोवर्धनेशजी का स्पष्टत: परिज्ञान हो जाता है। श्रीविट्ठलरायजी के स्मरण करने का एक अभिप्राय साम्प्रदायिक दृष्टि से यह भी संभव है कि-कवि ने अपनी छोटी वय में उनसे अष्टाक्षर मन्त्र की दीक्षा ली हो और बाद में श्रीगोवर्धनेशजी से ब्रह्म सम्बन्ध की। अतः दोनों पितापुत्रों का स्मरण साभिप्राय हो सकता है।

---

* वल्लभवंशावली दोहा २ तथा १८३

जाति—कवि जगतानंद की जाति का यद्यपि स्पष्टतः उल्लेख नहीं मिलता है फिर भी उनके 'आनंदान्त' अभिधान से ऐसा अनुमान होता है कि 'सम्पूर्णानन्द' गोकुलानन्द' परमानन्द' की भाँति वेभी संयुक्त प्रान्त के निवासी थे। इस प्रकार के आनंदान्त नाम उक्त प्रदेश में ब्राह्मणों में विशेषतया प्रचलित हैं। कवि की रचना में आये हुए 'रहिवो' 'करिवो' 'आन्यो' किस विरते पर तत्तापानी' आदि शब्द भी कवि के उक्त देश विशेष के भाषा-भाषी होने का संकेत करते हैं।

आत्म-परिचय-प्रदान के अभावकी परंपरा ने जहाँ भारतीय इतिहास में अनेकों को जनसमाज से अपरिचित सा रक्खा है वहां कवि 'जगतानन्द' भी उसी श्रेणी में आ जाते हैं। मातापिता का परिचय 'निवास स्थान' विशेष घटना एवं अन्तिम समय आदि कई ऐसी जिज्ञासाएं हैं जिनके सम्बन्ध में मौनावलम्ब ही उचित अथच उपादेय प्रतीत होता है।

निवास—कवि का जन्मस्थान चाहे जहाँ रहा हो अन्ततः प्रौढवय में उसका निवास स्थान व्रजमण्डल ही रहा है यह एक स्वतः प्रकाशित सत्य है। 'श्रीवल्लभवंशावली' का तत्सामयिक वर्णन, 'व्रजवस्तु-वर्णन' 'व्रज-महिमा' 'व्रजयात्रा-वर्णन' व्रजग्राम-वर्णन' आदि रचनाएँ इसी कथन की पुष्टि करती हैं-कवि की स्पष्टोक्ति-

तामें श्री गोकुल महा मोकों लागत मिष्ट"*तथा
"गोकुल अति देख्यो रसिक श्री गोकुल के मांझ।
गोकुल चित दीनो इहाँ सो कुल कयहुँन वांझ"§ आदि से गोकुल इनका स्थायी निवास - स्थान परिज्ञात होता है।

इस समय अर्थात् मुगल वादशाह औरंगजेव के शासन काल के प्रारंभ सं १७२० के लगभग गोकुल सम्प्रदाय का

---

* वल्लभ-वंशावली, ४। § व्रजग्राम-वर्णन ४।

मुख्य केन्द्र था,और यहीं समस्त सेव्य स्वरूप तथा गोस्वामि-वंशज विद्यमान थे। सं १७२० के अनन्तर राजनैतिक विषम-वातावरण के कारण शान्ति-भंग के भय से सम्प्रदाय में स्थान परिवर्तन की जो घटनाएँ घटी, उनमें से किसी एक का भी वर्णन कवि ने अपनी किसी भी रचना में नहीं किया है। यद्यपि यह आश्चर्य की बात है फिर भी--कवि के लिये तो सम्प्रदाय के मूल स्वरूप में कोई मौलिक अन्तर दृष्टि गोचर नहीं हुआ और इसीलिए उसने समय विशेष की उन घटनाओं पर कोई ध्यान देने की आवश्यकता नहीं समझी। सं० १७२६ के लगभग जबकि गिरिराज स्थान से यवनोपद्रव के कारण श्री-नाथजी के किसी सुरक्षित राज्य में पधारने का उपक्रम हो रहा था, गोकुल भी बहुत कुछ। साम्प्रदायिक शोभा से विहीन होने लगगया था। यद्यपि गोकुल की यह सम्पन्न स्थिति बराबर सौ वर्ष तक विद्यमान रही * फिर भी कवि की दृष्टि में भगवद्धाम होने के कारण वह सद अक्षय, अक्षुण्ण एवं रमाक्रीड़ अतएव सर्वसमृद्धियुक्त स्थान ही बना रहा, और कवि ने उस का वर्णन उसी रूप में किया।

वैदुष्य—'जगतानन्द' जैसा कि - उसकी रचनाओं के अध्ययन से अवगत होता है, हिन्दी भाषा का एक समर्थ कवि था। उसने जिन छंदों में अपने वर्ण्य विषय का प्रतिपादन किया है- उससे उसकी काव्यशक्ति का परिज्ञान तो होता है साथ ही उसके व्यापकज्ञान का भी परिचय मिलता है।

यह कहने में कोई हिचकिचाहट नहीं होनी चाहिये कि-कवि को हिन्दी भाषा (व्रजभाषा) के साथ हो अमर भारती

---

* सं० १६२८ में गोकुल में गो० श्री विट्ठलनाथजी ने स्थायी निवास किया था (मधुसुदन वंशावली)और सं० १७२८ में श्रीनाथजी व्रज से पधार गये थे।

(संस्कृत) का भी पाण्डित्य अधिगत था, जो ब्राह्मण जाति के लिये एक अनिवार्य उपादेय कार्य है। पुराणों का पाण्डित्य, एवं शुद्धाद्वैत साम्प्रदायिक सिद्धांतों के अवगाहन की शक जहाँ कवि में अपेक्षाकृत आवश्यक थी वहाँ 'वल्लभवंशावली' में वर्णित छप्पयों में बैठाई हुई जन्म कुण्डलियो के निरीक्षण से उसके ज्योतिष सम्बन्धी ज्ञान का भी पता लगता है।

इन सबसे कविके पाण्डित्य का सहज ही परिज्ञान हो जाता है, जो प्रसंगोपात्त कथन के लिये पर्याप्त है।

अंतिम समयः— जगतानंद के अन्य पारिवारिक सबधों के परिज्ञान के लिये जिस प्रकार कोई सूत्र प्राप्त नहीं होता, उनके अंतिम समय का परिज्ञान भी हम सं० १७८१ में समाप्त की हुई 'वल्लभ-वंशावली' के आधार पर अधिक से अधिक सं० १७८५-९० तक ही मान सकते हैं। उनका सांसारिक क्षण-भंगुर पांचभौतिक देह चाहे जब न रहा हो, पर यह निः सन्देह है-कि अपने समय का वह एक अप्रतिम साम्प्रदायिक हिन्दी भाषा का कवि आज भी अपने 'अक्षर देह' में साहित्य-जगत के आनन्द का एक अन्यतम साधन हो रहा है और वह इस प्रकार ' कीर्तिर्यस्य स जीवति ' के आधार पर अपनी नित्यता सिद्ध कर रहा है।

ग्रन्थ रचना— 'जगतानन्द' ने "व्रजग्राम-वर्णन" (ग्रन्थांक ४) में—

'श्रीवल्लभ-वंशावली' 'व्रज-वस्तुन के नाम'।
'श्रीविट्ठलघन जातरा' 'व्रज की स्तुती सुधाम' ॥१
चित लगाइ सुख पाइके सुनिके लखिके नैन।
'वर्णत व्रज के गाम सब' 'जगतनन्द' करि वैन ॥२

उल्लिखित दोहाद्वय में (१) वल्लभ वंशावली (२) व्रज-वस्तु-वर्णन , (३) श्रीविट्ठलनाथजी (गुसांइजी) की वन-यात्रा, जिसमें व्रज की स्तुति का भी सम्मिलन है * एवं (४) व्रजग्राम-वर्णन, नामक अपने रचना-चतुष्टय का परिचय दिया गया है।

प्रस्तुत संग्रह में प्रकाशित छै ग्रन्थों में से चार का नाम उपलब्ध हो जाता है पर कवि कृत (५) दोहरा साखी तथा (६) उपखाने सहित दशम-कथा का नाम नहीं मिलता । इससे यह भासित होता है कि-उक्त चार रचनाओं के अनन्तर ही कवि ने पञ्चम तथा षष्ठ रचना प्रस्तुत की है अन्यथा इन दोनों के नाम का समावेश भी अवश्य हुआ होता।

ग्रन्थ निर्माण-काल के सम्बन्ध में कवि ने केवल 'वल्लभ वंशावली' की ही पूर्ति का समय (सं० १७८१) दिया है -।- । प्रथम के चार ग्रन्थों के निर्माण-समय में भले ही पौर्वापर्य हो सकता है पर यह निर्विवाद है कि 'दोहरा साखी' और 'उपखाने सहित दशम-कथा' की रचना सं० १७८१ के अनन्तर ही हुई है ।

मेरी धारणा के अनुसार 'व्रजग्राम-वर्णन' में वर्णित उक्त ग्रंथों की पूर्वापरता बहुत ठीक है। कवि वल्लभ-वंश का एक अनन्य वैष्णव सेवक था, इस नाते अपने वर्ण्य विषय के लिये उसे अपने गुरु-कुल की परम्परा का अथ से इति पर्यंत वर्णन करना नितांत आवश्यक था और इसी दृष्टि को सम्मुख

---

* कवि कृत 'व्रजस्तुति' एक स्वतंत्र रचना भी हो सकती है- जो उपलब्ध नहीं हुई है।

-।- श्रीवल्लभ-वंशावली पत्र २३ दोहा सं० १८४ ।

रखकर कवि ने 'श्रीवल्लभ वंशावली' की रचना की है । श्री-वल्लभ-वंशीय शाखाओं के आधार स्कंधरूप श्रीविट्ठलेश प्रभु चरण (श्रीगुसाईं जी) की वन-यात्रा के उपक्रम रूप में व्रज की समस्त वस्तुओं का परिचय देने की आवश्यकता थी । अतः कवि ने 'व्रज वस्तु-वर्णन' नामक ग्रंथ की रचना कर इस आवश्यकता की पूर्ति की । इसके अनंतर धार्मिक जगत् में अपने एक विशेष स्वरूप की संरक्षक, समस्त सम्प्रदायों द्वारा होने वाली व्रजयात्रों की मूर्धन्य, 'श्रीगुसाईंजी की-वनयात्रा' की रचना की । यात्रा - वर्णन के अनन्तर व्रज के सम्पूर्ण ग्रामों के मौलिक स्वरूप से भाविक-जनों को अपरि-चित रखना कवि को अनभिप्रेत नहीं था एतदर्थ उसने 'व्रज ग्राम-वर्णन' द्वारा उक्त उद्देश्य की पूर्ति की । 'दोहरा साखी' में कवि ने अपने गुरु-गृह के प्रति अनन्यता का परिचय देकर उक्त ग्रंथ-रचना के फल स्वरूप 'उपखाने सहित दशम - कथा' में रसस्वरूप, व्रजेन्द्र भगवान् श्रीकृष्ण की चरित्र कथा का कीर्तन कर अपनी काव्य साधना को सफल बनाया ।

इस प्रकार उक्त सामञ्जस्य की कसौटी पर जगतानद की रचनाओं का पौर्वापर्य बहुत कुछ उपयुक्त जँचता है, और इस प्रयास में कवि सफल हुआ है, यह कहना अत्युक्ति न होगी ।

पाठकों के परिज्ञानार्थ नीचे प्रत्येक ग्रंथ का आवश्यक परिचय दिया जा रहा है:—

श्रीवल्लभ वंशावली—रचना सं० १७८१ माघ वदि २ सोम । प्रस्तुत प्रकाशन में सर्वप्रथम ग्रंथाङ्क १ के रूप में 'श्रीवल्लभ-वंशावली' का प्रकाशन किया गया है । सं० १९९६ में

प्रकाशित "काँकरोली का इतिहास" नामक ग्रंथ में मैंने इसका प्रासंगिक अंश * प्रकाशित किया था। अध्ययन से यह ग्रन्थ ऐतिहासिक प्रमाण साहाय्य के लिये अत्यन्त अपेक्षित समझा गया था, अतएव मुद्रणार्ह था। आज लगभग ५ वर्ष बाद इसके प्रकाशित होने का अवसर आया है।

सम्पादन के लिये इसकी निम्नलिखित प्रतियाँ उपलब्ध हुईः—

(१) सरस्वती-भंडार विद्याविभाग कांकरोली-हिन्दी बन्ध ५१ पु० सं० १। लेखन समय ×। लेखक ×।
पाठ भेद में इसका संकेत "काँ०" दिया गया है,

(२) स्व. महता श्रीलज्जारामजी बूंदी के स्मारकार्थ रामजीवनजी नागर बूंदी निवासी द्वारा अन्य अनेक ग्रन्थों के साथ सरस्वती-भंडार कांकरोली को समर्पित तथा सधन्यवाद स्वीकृत। सं० शु० बन्ध १०५ पु० सं० ८ लेखन समय सं० १९०७ चैत्रशु ६ भौम लेखक- गोपालराम नागर जाजपुर (जहाजपुर ?)

इस प्रतिलिपि में अशुद्धिया बहुत है और लेखक कहीं कही बीच में कई दोहे लिखना भूल गया है। अन्य प्रतियों से सम्वाद करने पर इसमें नीचे लिखे दोहे अधिक रूप में पाये गये हैं:—

(क) पत्र ७ में मुद्रित ३८ वें दोहे के अनन्तर इस प्रकार दोहा औरभी है "पांछे मथुरा बीच में सपने विट्ठलनाथ आए गोकुल चंद्रजी ब्रह्मचारि नारायण साथ ॥ ३९ ॥

* देखो उक्त ग्रन्थः-वल्लभाचार्य चरित्र पत्र ५०, तथा विट्ठलनाथजी चरित्र पत्र १०९ विद्याविभाग कांकरोली द्वारा प्रकाशित।

(ख) पत्र १२ में मुद्रित दोहा ८१ का अन्तिमार्ध और ८२ का पूर्वार्ध इस प्रकार है —

"अरु दूजे रघुनाथजी आॅनन्द हृदै समाइ ॥ ८१ ॥
तीजे दामोदर लखे श्री गोपाल के एक ॥

(ग) पत्र १४में मुद्रित ९९ वे दोहे का उत्तरार्ध इस प्रकार है.-

"चिम्मनजी आनन्द करत काम न इनके जोड"॥

(घ) पत्र १६ पर मुद्रित १२३ वें दोहे का तृतीय पाद इस प्रकार है:-

"सबकों आनन्द देत है०'*

(३) द्वारिकादासजी पुरुषोत्तमदास जी परिख की एक प्रतिलिपि जो व्रज की किसी (सम्प्रति अपरिचित) पुस्तक के आधार पर है । नवीन, पूर्ण एवं प्रायः अशुद्ध है। पाठ भेद में इसका संकेत 'द्वा' इस अक्षर द्वारा दिया गया है ।

उक्त तीनों प्रतियां प्राय अशुद्ध एवं पूर्ण हैं । प्रधान दो प्रतियों के सम्वाद से उपयुक्त मूल पाठ निर्धारित किया गया है ।

प्रस्तुत ग्रन्थ में कवि ने "शुद्धाद्वैत पुष्टिमार्ग के सस्थापक जगद्गुरु श्रीवल्लभाचार्य के मूलपुरुष, श्रीवल्लभाचार्य, श्रीविट्ठलनाथजी तथा उन दोनों के

---

*उक्त पुस्तक के उल्लिखित पाठभेद किंवा विशेषताऐं मुद्रण समय में नहीं दी जा सकीं अतः यहां उल्लेख किया गया है ।

सेव्य दश स्वरूप तथा विट्ठलनाथ जी के सातों पुत्रों की वंशावली का वर्णन किया है, जो वंशावली की रचना के समय (सं० १७८१ पौषवदी ६) तक है।

इस वशावली में सातों पुत्रों के लीलास्थ (मुक्त) वंशज ११८, विद्यमान १०२, एकत्र २२० का उल्लेख है*

ग्रन्थ में एकत्र छन्दों की सख्या १८४ है जिसमें ६, १५, २३, संख्या वाले तीन छप्पयों में क्रमशः श्रीवल्लभाचार्य श्रीविट्ठलनाथ जी और श्रीगोकुलनाथजी की जन्मपत्रिकाएँ दी हुई हैं और शेष १८१ दोहा हैं। प्रारंभ और अन्त के कुछ दोहों में कवि ने अपने विषय में भी कुछ कहा है, जिस का उद्धरण प्रारंभ में उनके जीवन चरित में किया गया है।

श्रीवल्लभाचार्य के वंशजों के सम्बन्ध में एक "वल्लभीय वंश-कल्पवृक्ष + भी उपलब्ध होता है, जिसका रचयिता गंगादास-सुत राजाराम गुर्जर, राजनगर (अहमदाबाद) निवासी और रचनाकाल सं० १७७६ कार्तिक शु० १ है राजाराम ने इस वंशवृक्ष के पीछे परिचय इस प्रकार दिया है:-

'श्रीमद्वल्लभ-वंसवर कल्प वृक्ष विस्तार।
जे कुसुमित, पुष्पित, फलित पुरुषोत्तमहिं विचार १

---

* देखो प्रस्तुत ग्रन्थ पत्र २३ पर मुद्रित कोष्ठक। दोहा सं १७५ तथा १७८ में यद्यपि लीलास्थ बालकों की संख्या ११६ और एकत्र की संख्या २२१ लिखी है, पर योग में १ का अन्तर पड़ता है।

+ स भं० हि० ग्रंथ० ६० पु० ७ विद्या विभाग कांकरोली।

श्रीवल्लभ प्राकट्यतें वल्लभ-कुल अनुमान ।
दो सो सठतालीस ? वपु पुष्टि प्रकाशन ? भान ॥२॥

तातें अव आरोग्य हैं सुभग ज्ञानवह (६३) रूप ।
जिनकौ जसु विख्यात जग जिनके कृत्य अनूप ॥ ३ ॥

श्री गिरिधर के वंस में तित्तर (७३) हैं आरोग्य ।
वालकृष्ण जो के कुलहि नो (६) स्वरूप स्तुति योग्य ॥ ४॥

श्रीरघुनाथजी दोय वपु श्रीयदुनाथजी सात ।
श्रीघनश्यामजी दो य ए वल्लभकुलविख्यात ॥ ५ ॥

संबत सत्रह सौ वरस अठहत्तर लौं लेख ।
अब दिन दिन दूनो बढौ वल्लभ-बंश विशेष ॥ ६ ॥

रहो सदा प्रफुलित यहै कल्प वृक्ष जग मांहि ।
भगवदीयनसिर झुकि रहो यही वृक्ष की छांहि ॥ ७ ॥

यह कुल कौ औतार भू आगत उधारन काज ।
जिनके सरन हि तें वढ़ै व्रजपति भक्ति समाज ॥ ८

श्रीमद्वल्लभ-कुल सदा पद पंकज विसराम ।
गुर्जर गंगादास-सुत सेवक राजाराम ॥ ६ ॥

राजनगर शुभ देश मधि सारगपुर निज वास ।
प्रेम भक्तिसों खेंचि करि कीनों वुद्धि विलास ॥ १० ॥

वल्लभकुल-परताप वल रहै सदा यह आस ।
भगवदियन के चरन-रति तिनसों दृढ़ विश्वास ॥ ११ ॥

उक्त दोनों संकलयिताओं के कथनानुसार निम्न-लिखित कोष्ठक से इस प्रकार परिज्ञात होता है:—

सं०	वंश कर्त्ता	लीलास्थ वंशज		विद्यमान		एकत्र	
		राजा राम	जग दानंद	राजा राम	जग दानंद	राजा राम	जग दानंद
१	श्रीगिरिधरजी	×	२६	७३	८०	×	१०९
२	श्रीगोविन्दजी	×	१६	–	–	×	१६
३	श्री बालकृष्णजी	×	२८	६	११	×	३६
४	श्रीगोकुलनाथजी	×	५	–	–	×	५
५	श्रीरघुनाथजी	×	१७	२	३	×	२०
६	श्रीयदुनाथजी	×	१८	७	६	×	२४
७	श्रीघनश्यामजी	×	५	२	२	×	७
	एकत्र	१५४	११८	९३	१०२	२४७	२२०

यह एक विचारणीय प्रश्न है कि-लगभग दो वर्ष के भीतर राजाराम और जगतानंद के उल्लेखों में क्रमश लीला-स्थ वंशजों में ३६, विद्यमान वंशजों में ९, एवं एकत्र वंशजों में २७ का अन्तर आता है। संभव है इसमें किसी अन्यतर लेखक के अपरिज्ञान के कारण संख्या की न्यूनाधिकता हुई हो। ऐसा भी परिज्ञात होता है कि-राजा राम ने लीलास्थ वंशजों की संख्या में श्रीवल्लभाचार्य, उनके दोनों पुत्र तथाच आठ पौत्र इस प्रकार एकत्र ११ संख्या का योग और भी किया है, जिसका संकलन जगदानंद की रचना में नहीं किया गया है, अतः दोनों के समतुलनार्थ लीलास्थ वंशजों और एकत्र

वंशजों में ११ का अन्तर निकाला जा सकता है, ऐसी स्थिति में वास्तविक संख्या का अन्तर क्रमशः लीलास्थ वंशजों मे २५, और एकत्र वंशजों में १६ रह जाता है। फिर भी वर्त्तमान काल की विद्यमान वंशज संख्या ७५ * को देखकर यह सहज ही कहा जा सकता है कि यह संख्या न्यून हो गई है। आज से लगभग १० वर्ष पूर्व यह संख्या घटते घटते ४४, ४५ × तक पहुंच गई थी।

प्रस्तुत वंशावली के प्रकाशन के पूर्व विद्याविभाग कांकरोली से द्वा० ग्र० माला के १६ वें पुष्प के रूप में कवि केशव किशोर कृत "आचार्य वंशावली" प्रकाशित हो चुकी है जिसका रचना-काल सं० १६८० के लगभग है। उक्त 'आचार्य वंशावली' में कवि ने श्रीवल्लभाचार्य के चरित्र वर्णन के अनन्तर उनके वंशजों का भी उल्लेख किया है।

इस प्रकार इस वंश के ऐतिहासिक नाम-परिज्ञान के लिये क्रमश' कई प्रामाणिक उद्धरण मिल जाते हैं:—

१ सं० १५८० के लगभग इस वंश का विकास प्रारंभ हुआ।

२. सं० १६८० के लगभक कवि केशव किशोर ने (आचार्य वंशावली) की रचना की।

३. सं० १७७६ में राजाराम ने वल्लभवंश कल्पवृक्ष और सं० १७८१ में जगतानन्द ने (श्री वल्लभ वंशावली) की रचना की।

---

* सं० २००१-२ की नाथद्वारा कांकरोली से प्रकाशित टिप्पणी के आधार पर।

× नाथद्वारा की तत्सामयिक टिप्पणी के आधार पर

४. सं० १८४३ में पं० निर्भयराम जी ने संस्कृत श्लोक बद्ध 'वंशकल्प वृक्ष' की रचना की जिसमें वंशजों की संख्या इस प्रकार संकलित की है:—

श्री० गिरिधरजी के वंशज २४७
श्री० गोविंद जी के वंशज २१
श्री० बाल कृष्ण जी के वंशज ५८
श्री० गोकुल नाथजी के वंशज ६
श्री० रघुनाथ जी के वंशज ३७
श्री० यदुनाथ जी के वंशज ५०
श्री० घनश्याम जी के वंशज ६

४३१

निर्भयरामजी ने अपने समय में विद्यमान वंशजों की संख्या का उल्लेख नहीं किया है। केवल उन्होंने मूल पुरुष से लेकर उस समय तक संभूत वंशजों का ही उल्लेख किया है। इसके अनन्तर सं० १९८१ के लगभग पेटलादी रणछोड़दास घरजीवनदास बंबई वालों ने इस वंश-संकलना को अपने हाथ में लिया और संग्रहकर एक पुस्तक का प्रकाशन किया जो सं० १९९८ तक का संकलन है इस वंशावली में वंशजों का एकत्र संख्या ९४१ दी गई है। *

इन पर विचार करने से विगत चार शताब्दियों में इस प्रकार वंश-वृद्धि होने का परिज्ञान होता है:—

---

* यह ग्रन्थ "श्री मद्वल्लभाचार्यना वंशनी वंशावली" इस नाम से सेठ नारायणदास जेठानन्द आसनमल ट्रस्ट फंड २३६ कालबादेवी रोड बंबई नं० २ से प्रकाशित हुई है मूल्य १।)

सं०	१५८१	के लगभग	३
सं०	१६८१	के लगभग	५०
सं०	१७८१	के लगभग	२४७
सं०	१८४२	के लगभग	४३१
सं०	१९८१	के लगभग	९४१

एतावता यह सरलतया विदित हो जाता है कि-सं० १६८१ के अनन्तर प्रति शताब्दि में संख्या लगभग द्विगुणित होती चली गई है।

"जगतानन्द" ने अपनी 'वल्लभ वंशावली में श्रीगुसांई जी के सात पुत्रों में से केवल अपने गुरु-गृह श्रीगोकुल नाथ जी के वंशजों का ही जन्म संवत् सहित वर्णन किया है जिनसे उसकी गुरु-भक्ति और गुरु के प्रति श्रद्धा परिलक्षित होती है। ६६ से १६५ पर्यन्त ९९ दोहों में सातों पुत्रों के वंश वर्णन के अन्तर १६६ से १८४ तक १८ दोहों में उपसंहार है जिसमें ग्रन्थकार ने सातों वंशों की एक तालिका-सी दी है। कवि ने इसमें लीलास्थ तथा, विद्यमान वंशजों की संख्या के साथ उनकी एकत्र योग संख्या बतलाई है।

जहाँ तक ध्यान है अन्य किसी वंश-परिचय के लेखक ने इतना अन्वेषण नहीं किया है। इसी तालिका को समझने के लिये पत्र २३ पर एक चतुष्क (कोष्ठक) बना दिया गया है।

जैसा कि प्रथम कहा जा चुका है- स० १८४२ में पं० निर्भयरामजी ने संस्कृत में वंश-कल्पवृक्ष लिखा है उसमें गोकुलनाथजी (चतुर्थ पुत्र) के वंशजों की संख्या ९ कही गई है, जहाँ जगतानन्द ने एकत्र ५ बतलाई है, और सभी को लीलास्थ कहा है। अर्थात् इस ग्रन्थ की रचना के समय गोकुल

नाथ जी का कोई वंशज विद्यमान नहीं था। मेरी मति से उक्त समस्त वंशतालिकाओं के वैषम्य का कारण यह ज्ञात होता है कि 'जगतानन्द' ने दत्तक रूप में आये हुए वंशजों का (औरस न होने के कारण) उल्लेख नहीं किया है जो निर्भयराम जी के समय तक ४ की संख्या में इस वंश में आगये थे। अर्थात् 'जगतानन्द' ने केवल औरस वंशजों का ही वर्णन किया है, और निर्भयरामजी ने दत्तक रूप मे भी आये हुए वंशजों का भी उल्लेख कर दिया है।

२. 'श्रीगुसांइजी की वनयात्रा'— (ग्रन्थाँक— २)

इस ग्रन्थ की रचना का समय स्पष्टतया उपलब्ध नहीं होता है। क्योंकि प्रस्तुत पुस्तक की हमे कोई प्राचीन प्रति प्राप्त नहीं हुई। उक्त उपलब्ध वनयात्रा की पुस्तक द्वारका-दासजी परिख वार्ता सा० सम्पादक के पास विद्यमान प्रति की प्रति-लिपि है जो ब्रज में विद्यमान किसी (सम्प्रति अज्ञात) प्रति से लिखी गई है। अतः हमें न तो उसके लिये कोई पाठ देने का सहारा ही मिलता है, और न मूल पाठ के संशोधन का अवसर ही।

इस कारण जैसा कुछ परिज्ञान हो सका पाठ का संशोधन किया गया है। दोहा में जहाँ अक्षरों की न्यूनता विदित हुई है वहाँ कोष्ठक में अक्षर दिया गया है। जो अभिप्राय समझ में नहीं आया उसके लिये प्रश्नवाची (?) चिन्ह लगाया गया है।

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है—इस ग्रन्थ की कोई प्रति हमें हस्तगत नहीं हुई है, पर सर० भं० विद्याविभाग काँकरोली में (हि० बन्ध ८६ पु० सं० ३) एक गद्य की प्रतिलिपि

उपलब्ध होती है—जिसके लिये पत्र २३-२४ पर प्रस्तुत ग्रन्थ में 'एक वक्तव्य' प्रकाशित किया गया है—अतःतद्विषय में यहाँ पुनर्लेखन पिष्टपेषण होगा। उक्त दोनों विवरणों में गद्य पद्य एवं सम्वत् के भेद के अतिरिक्त अन्य कोई मौलिक भेद नहीं है। अस्तु

प्रस्तुत यात्रा-विवरण से श्रीगुसाँइजी की ऐतिहासिक दिन चर्या का पता लगता है जो उनके इतिहास के लिये एक आवश्यक संग्रहणीय विषय है। इस प्रसंग से जहाँ उस समय के ब्रज के स्थलों का नाम और यात्रा का क्रम विदित होता है, वहाँ नये ऐतिह्य का संसूचन भी। जैसाकि पत्र ३० पर अलीखान पठान का उल्लेख है। दोहा सं० ५६ में इनको गोरवा (क्षत्रियों का अवान्तर भेद) जाति का लिखा है- अर्थात् अलीखान यवनों के द्वारा बलात् धर्मान्तरित किये जाने के पहले गोरवा क्षत्रिय जाति के थे। इनका पूर्व नाम क्या था* कुछ विदित नहीं है। इनका व्यवसाय बछड़े बेचना था। संवत् १६२४ में बच्छुवन—जिसका दूसरा नाम 'सेई' गाम था—में श्रीगुसाँइजी के इनको दर्शन हुए और यह उनसे प्रभावित होकर उनके वैष्णव शिष्य हो गये।+ इस वर्णन से यह विदित हो

---

* विद्याविभाग द्वारा प्रकाशित 'विट्ठलेश चरितामृत (पत्र १८८) में द्वारका दासजी परिखने 'अलीखान' को बछड़ों का चोर लिखा है जो अब ठीक नहीं जचता। वार्त्ता से भी इसकी पुष्टि नहीं होती प्रत्युत वह एक प्रमाणिक व्यक्ति ठहरता है। अतः इसका संशोधन किया जाना चाहिये।

+ देखो २५२ वैष्णव की वार्त्ता सं० १७।

जाता है कि वैष्णवता का द्वार प्रत्येक जाति के लिये समान रूप से खुला हुआ था। इस वैष्णवता का असाधारण लक्षण—आत्मा की वह प्रसुप्त अन्तर्ज्योतिर्मय लगन थी जिसका परिज्ञान 'श्रीविट्ठलनाथ प्रभुचरण' जैसे समर्थ तत्वदर्शी गुरु ही कर सकते थे। उनके अनन्तर इस क्रान्त दर्शिता के अभाव के कारण यह सुन्दर दीक्षा केवल उच्च वर्ण तक ही सीमित रह गई। अस्तु

पत्र २८ पर एक 'चन्द्रसेन कायस्थ' का नाम आता है जो संभवतः कोई प्रसिद्ध राज्य कर्मचारी व्यक्ति थे, और गुसांइजी से जिनका घनिष्ठ परिचय था।

३. व्रजवस्तु वर्णन—(ग्रन्थांक-३)

इसकी भी कोई प्राचीन प्रति हमें उपलब्ध नहीं हुई। अतः प्रामाणिक रीत्या इसका भी संशोधन तथा पाठ-भेद नहीं दिया जा सका है। यह प्रति भी श्री द्वारिकादासजी परिख की प्रति के आधार पर है जिसका मूल प्रति व्रज में उपलब्ध कोई प्रति कही जाती है। प्रस्तुत वर्णन के सम्बन्ध में अन्य ग्रन्थों के आधार पर जहाँ कुछ २ मत भेद मिलता है, वहा उसका उल्लेख किया गया है।

इस वर्णन से व्रज की तात्कालिक महत्व पूर्ण वस्तुओं का परिज्ञान होता है, जो व्रज-परिक्रमा के मुख्य आकर्षण केन्द्र है। इन वस्तुओं के नाम व्रजयात्रा सम्बन्धी अन्य ग्रन्थों में भी मिलते हैं। विद्याविभाग सरस्वती भंडार कांकरोली में विद्यमान संवत १८८८ की एक हस्त लिखित (हि० व० १०८ पु० सं० ८) प्रति में कहीं २ कुछ नामान्तर मिलते है, जिसका कारण शुद्ध पाठकी अनुपलब्धि भी हो सकती है, और तात्कालिक वैसी

प्रसिद्धि भी×। इस प्रकार प्रस्तुत वर्णन से कुछ नवीन परिज्ञान अवश्य होता है।

'व्रजवस्तु-वर्णन' के आद्योपान्त पढ़ जाने पर प्रतीत होने वाली एक न्यूनता भी सम्मुख उपस्थित होती है। यह एक आश्चर्य की बात है कि 'जगतानन्द' ने श्रीगुसांइजी की बैठकों का नामोल्लेख तो किया है पर श्रीवल्लभाचार्य की बैठकों की ओर कुछ भी संकेत नहीं किया —जो सम्प्रति २२ किंवा २४ की संख्या में व्रजमण्डल में विद्यमान है*। इसी प्रकार अपने गुरुगृह के अधिपति तथा गोकुलनाथजी तथा अन्य बालकों की भी बैठकों का नाम निर्देश नहीं है— इस उदासीनता किंवा न्यूनता का कारण क्या हो सकता है? समझ में नहीं आता। यह भी सम्भव है कि मूल अथवा प्राचीन प्रति में इसका उल्लेख हो और प्रस्तुत पुस्तक की आदर्श प्रति में लेखक के प्रमाद से उतना अंश छूट गया हो, फिर भी यह न्यूनता खटकती है और अवश्य खटकती है। अस्तु

प्रस्तुत वर्णन में जहां उक्त न्यूनता झलकती है वहाँ एक विशेषता भी प्रतिभासित होती है, अधिकांश स्थलों की नाम-गणना के अनन्तर कवि ने यह अवश्य कहा है कि उक्त वस्तुएँ प्राचीन तो इतनी है परन्तु नवीन भी वस्तुए है जिनका उल्लेख आवश्यक नहीं है ऐसी नवीन वस्तुओं का अभिधान-प्रदर्शन यद्यपि नहीं किया गया है तथापि प्राचीन

× प्रस्तुत प्रकाशन में यथा स्थान इस प्रकार का उल्लेख किया गया है।

* देखो कांकरोली का इतिहास पत्र ९५ परिशिष्ट ६।

वस्तुओं के नाम निर्देश के अतिरिक्त उनका परिज्ञान सहज हो हो जाता है। कविने जिन प्राचीन नामों की गणना कराई है उसका कवि के पास कोई प्रवल प्रमाण अवश्य रहा होगा। और यह निःसन्देह है कि - उसके समय तक कई नवीन वस्तुओं का जहाँ निर्माण हो गया था, वहाँ प्राचीन नाम कवि के समय (सं० १७६०) तक अवश्य प्रचलित थे। आज ऐसे कई स्थल और वस्तुए या तो नाम परिवर्तन से अपरिचित हो गई हैं अथवा प्रकृति-परिवर्तन से विलुप्त।

इन सब दृष्टियों से प्रस्तुत वर्णन यात्रानुजनों के अर्थ अत्यधिक उपयोगी है।

४. व्रजग्राम वर्णन— (ग्रन्थांक ४)

इस ग्रन्थ की भी कोई प्राचीन प्रति उपलब्ध नहीं हुई है अतः न तो पाठ-भेद ही दिया जा सका है और न सम्पूर्ण संशोधन भी किया जा सका है। श्रीद्वारकादासजी परिख ने व्रज की जिस प्रति के आधार पर प्रतिलिपि की थी उसका अभिज्ञान भी नहीं मिला है, अन्यथा उसे प्राप्त कर इसका पाठ संशोधन किया जा सकता था। फिर भी ग्रन्थ उपादेय होने कारण प्रकाशित किया गया है।

इस ग्रन्थ में ही रचयिता ने स्वरचित (श्रीवल्लभ वंशावली) (व्रजवस्तुवर्णन, श्रीविट्ठलनाथ जी की वनयात्रा,) का उल्लेख कर 'व्रजग्राम-वर्णन' की सूचना दी है। प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रथम दोहा के परार्द्ध "श्री विट्ठल वन जातरा, व्रज की स्तुती सुधाम" से ऐसा भी प्रति भासित होता है कि कविने 'व्रज स्तुति' नामक ग्रंथ की रचना की हो जो अभी तक उपलब्ध नहीं

अतः यह भी सम्भव है कि कई दोहे अन्य की भी रचना है जिन्हें 'जगतानन्द' ने संशोधित कर अपने भाव के साँचे में ढाल लिया है। 'दोहरा साखी' के सदृश रचनाओं के सम्बन्ध में इसी प्रकार की एक रचना 'कृष्णदास' की उपलब्ध होती है, जिसे यहाँ प्रकाशित करने का लोभ संवरण नहीं किया जा सकता।

अथ दोहरा साखी

(कृष्णदास-कृत)

चतुर्मुख च्यारों वेद पढ़ि मनकों धरत न धीर।
ब्रह्मा मन पछतातु है गोकुल भयो न अहीर ॥ १ ।
जाके किये तीन गुन औरु तत्व चौवीस ॥
ता पहि गोकुल ग्वालिनी फूल गुंथावत सीस ॥ २ ॥
शिव विरंचि पावें नहीं ब्रह्मा सदा सुचेत ।
ताकौ गोकुल ग्वालिनी रपटि चटेका देत ॥ ३ ॥
ब्रह्मादिक शिव आदि दै जे फल मांगत सेई ।
सो गोकुल की ग्वालिनी संत न कोऊ लेई ॥ ४ ॥
जा रज के तन परसिकें मुगति पाइए चारि ।
सो रज ब्रज-बाला सवै डारति घूरे भारि ॥ ५ ॥
तुम्हें हमारी कछु नहीं हमें तुम्हारी पीर ।
जादौ कुल की राखियो मति व्है जाओ अहीर ॥ ६ ॥
कोटि दोस छिन में हरै श्रीवृन्दावन को नाऊं ।
तीन लोक पर गाइये वरसानो नन्दगांव ॥ ७ ॥
वगर, नगर, डूंगर, डगर, वन, उपवन, सरिताउ ।
जहं तहं देखूं द्रुम लता सुमिरत राधा - नाऊं ॥ ८ ॥

गोरि साँकुरी, दानगढ़, राधाकुंड, अटोरु ।
बरसानो, संकेत वह तहाँ वसहु मन मोरु ॥९॥
श्रीवृन्दावन की कुञ्ज में धारें नटवर भेषु ।
ताही के गुन रूप की पार न पावे सेसु ॥ १० ॥
मोर चन्द्रिका सीस पर मुख मुरली की घोर ।
श्रीवृन्दावन की कुंज में विहरत युगल किशोर ॥ ११ ॥
श्रीवृन्दावन की माधुरी नित नौतन नवरंग ।
'कृष्णदास' सो क्यों पाइए बिनु रसिकन के संग ॥१२॥

॥ इति दोहरा साखी सम्पूरन ॥

मेरी व्यक्तिगत धारणा है कि, उक्त दोहरासाखी में कवि ने श्रीगुसाँइजी के चतुर्थ पुत्र 'श्रीवल्लभ—गोकुलनाथ जी—का ही, उल्लेख किया है। जैसाकि कवि के परिचय से ज्ञात होता है वह उनके ही वंशज श्रीगोवर्धनेशजी का शिष्य था। अतः उस-का अपने गुरु-वंश के मूल पुरुष के प्रति दृढ़ भाव होना स्वाभाविक है और यह कट्टर किंवा कटु अनन्यता जिसे किसी अंश में पुष्टिसम्प्रदाय में असहनीय भी कहा जा सकता है—इस घर के सेवक शिष्यों के अतिरिक्त अन्यों में उपलब्ध नहीं होती। ऐसा वर्णन सामाजिक दृष्टि से भले ही समालो-चना का विषय बन जाय, पर साहजिक दृढ़ भावना की भित्ति पर कवि को 'विवश' इस उपाधि से विभूषित कर छोड़ा भी जा सकता है।

इसकी रचना सं० १७८१ में रचित (वल्लभ-वंशावली) के अनन्तर होनी चाहिये जैसाकि—भूमिका भाग में 'रचना' विषय में प्रतिपादित किया गया है।

६. उपखाने सहित दशम लीला— (ग्रन्थांक-६)

इसका अपर नाम 'उपखाने सहित दशम चरित श्री मद्भागवत' भी उपलब्ध होता है। इस की निम्न लिखित प्रतियां उपलब्ध हुई हैं जिनसे पाठका समुचित सम्वाद किया गया है:—

१ सरस्वती भंडार विद्याविभाग कांकरोली (हि० बं० ७६ पु० सं० ५) की हस्तलिखित प्रति जिसका लेखक 'हरि कृष्ण भट्ट' है। यद्यपि इसका लेखन-काल उपलब्ध नहीं होता फिर भी लेखक का समय अन्य पुस्तकों के आधार पर सं० १७८८ के आसपास ज्ञात होता है। इस आधार पर यह प्रति संभवतः १८ वीं शताब्दी के अन्तिमपादकी प्रतीत होती है।* यह प्रति अपूर्ण केवल १५ उपखाने तक ही मिली है। प्रारम्भ में इसका नाम "उपखाने सहित श्रीकृष्ण लीला" दिया हुआ है। इसमें प्रायः प्रत्येक छन्द में कवि के नाम की छाप 'जगनन्द' मिलती है जो अन्य प्रतियों में प्रायः नहीं है। अपूर्ण उपलब्धि एवं किसी विशेषता के अभाव मे इसका पाठभेद नहीं दिया गया है

२—सर० भं० काँकरोली विद्याविभाग (हस्त लिखित हि० बंध ११२ पु० सं० ७)। लेखक तथा लेखन समय अज्ञात। पत्र २३, पूर्ण। इसका नाम 'उपखाने सहित दशमकथा' है। इसमें १०० लोकोक्तियों पर रचनायें हैं। यद्यपि पुस्तक सुन्दर लिखी गई है, परन्तु प्रायः अशुद्ध है। इसमें श्लोक संख्या २५२ दी गई है जो अनुष्टुप् के परिमाणों में है।

---

*सं० शा०बन्ध ११२/८ में श्रीकृष्ण-सुत हरि कृष्ण लेखक उपलब्ध होता है।

इस प्रांत का पाठभेद टिप्पणी में ' कां० ' इस नाम से दिया गया है।

३. सर० भं० कांकरोली विद्याविभाग हस्तलिखित हि० वंध १०६ पु० सं० १। पत्र संख्या अलिखित। पूर्ण। अशुद्ध। इसका नाम ' उपखाने सहित दशम–लीला' दिया गया है। १०० लोकोक्तियों पर पद्य रचना है।

इस प्रति का पाठभेद टिप्पणी में ' स० ' इस नाम से दिया गया है।

४. मुद्रित एक प्रति हमें पं० जवाहरलालजी चतुर्वेदी मथुरा के संग्रह से मिली।

इसके अनुसार जो पाठभेद दिया गया है। उसका संकेत हमने टिप्पणी में ' मु० ' दिया है।

यह प्रति सन् १६०८ के पूर्व किशोरीलाल मेनेजर द्वारा " नरमदा=रायल प्रिन्टिङ्ग प्रेस" जवलपुर में मुद्रित हुई थी और उसका सम्पादन श्रीयुत् चतुर्वेदी चतुर्भुजजी पाण्डे मथुरारामजी द्वारा (निवासी (?) ने) किया था और पं० शिवप्रसाद शर्मा हेड मास्टर ब्रेंच स्कूल कटनी मुडवारा ने इसे प्रकाशित किया था। इसकी भूमिका में कवि के विषय में कोई परिचय नहीं दिया गया है। इस पुस्तक में भी १०० कहावतों पर रचना उपलब्ध है। ग्रन्थ की अन्तिम पुष्पिका- "इति श्री जगतानन्द उपखान सहित दशम चरित श्रीमद्भागवत संपूर्णम्" इस प्रकार छपी है। पुस्तक-प्राप्ति का स्थल. कर्तारम गरीवदास ठिकाना कर्तारगढ़ मथुरा तथा संशोधक एवं शुद्ध लेखक पं० शिवप्रसाद शर्मा कटनी मुडवारा था।

'उपखानेसहित दशम-लीला' में १००, कुछ में १०२ उपखानों-लोकोक्तियों-कहावतों पर भगवान् श्रीकृष्ण के चरित्रों का चित्रण किया गया है। यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण न होगा कि—कवि ने श्रीकृष्ण के चरित्रों का वर्णन, अवतार के उपक्रम से प्रारम्भ करते हुए अन्तिम समय (तिरोधान लीला) तक जिस सौष्ठव के साथ किया है, और उसकी नींव जिन लोकोक्तियों पर रक्खी है उनका निर्वाचन सुन्दर अथच मौलिक ढंग से हुआ है। इसमें कवि की प्रतिभा, संक्षेप में बहुत कुछ कहने की उसकी विशिष्टता एवंच निर्वाह-शैली स्पष्टतया पृथक् प्रतिभासित होती है। और ऐसा करने में कवि पूर्णतया सफल हुआ है, यह बिना कहे रहा नहीं जा सकता। *

जगतानंद के रचित कई पद (कीर्तन) सरस्वती भंडार के कीर्तन-सग्रह में विद्यमान हैं जिनकी अनुक्रमणिका तयार की जा रही है, अतः सम्प्रति वे यहाँ प्रकाशित नहीं किये जा सके। इस प्रकार कवि 'जगतानंद' की यावदुपलब्ध रचनाओं का संक्षिप्त परिचय पाठकों के सन्मुख उपस्थित है। प्रस्तुत विषय में जिनके पास कुछ अन्य सामग्री हो अथवा कवि के कुछ विशिष्ट परिचय से वे परिचित हों तो कृपया सूचना भेजनें का कष्ट करें जिससे उसे परिपूर्ण किया जा सके।

---

* इसकी रचना स० १७८१ में रचित 'वल्लभवंशावली' के अनन्तर हुई है जैसा कि—भूमिका—भाग के 'रचना' विषय में प्रतिपादित किया गया है।

आशा है पाठक इस रचना का आस्वाद कर कवि के परि-श्रम को सफल करने का पुण्य कार्य करेंगे। इस प्रकार के सदनुष्ठान से जहाँ कविकृत श्रम की सफलता होगी वहाँ प्रकाशकों को प्रोत्साहन मिलने के कारण अन्य प्रकाशनों को भी अवसर अधिगत हो सकेगा। कांकरोली विद्याविभाग के सरस्वती-भंडार में ऐसी कई कवियों की कृतियाँ है जो-अन्यत्र अज्ञात एवं अप्रकाशित हैं।

कवि के आवश्यक परिचय तथा उसकी कई रचनाओं को प्रकाशनार्थ प्रदान करने लिये मेरे अन्यतम मित्र, एवं सहयोगी वार्तासाहित्य के विशेषज्ञ श्रीद्वारकादासजी परिख काँकरोली का उपकार विस्मरण नहीं किया जा सकता है- जिससे यावदुपलब्ध यह रचनाएँ साहित्य जगत् के सन्मुख उप-स्थित करने का आज सुअवसर प्राप्त हुआ है।

आशा है साहित्य रसिक सज्जन स्वभाव आपाततः किंवा विवशता से संभूत त्रुटियों के लिये क्षमा कर स्वकीय गुण ग्रहिलता का परिचय प्रदान करेंगें। इति शुभम्

कांकरोली:-
रथ यात्रोत्सव
सं २००२
ता० ११-७-१९४५ बुध

पो० कण्ठमणि शास्त्री
"विशारद"
"मंत्री शुद्धाद्वैत एकेडमी"
तथा
संचालक-विद्याविभाग

"जगतानन्द"

* ग्रंथाङ्क-१

श्रीवल्लभ वंशावली

मंगलाचरण—

दोहा:-

'श्रीवल्लभ-वंसावली' जो सुनि है चितलाइ ।
ताके वंस विसाल अति, ह्वै है नित सुख पाइ ॥१॥
श्रीगोवर्द्धनईस प्रभु, हृदै रहो करि धाम ।
जिनके पद जुग कमल कों, करि 'जगनंद' प्रनाम ॥२॥
व्रज चौरासी कोस के बरनत हों सब गांउ ।
'जगतनंद' विनती करत जिनके जानत नांउ ॥३॥
तामें श्रीगोकुल महा, मोकों लागत मिष्ट ।
श्रीवल्लभकुल बरनि हों, इह मेरो है इष्ट ॥४॥

वंश-वर्णन—

भरद्वाज के वंस में, प्रगट लियो अवतार ।
गह्यो जु विष्णुस्वामि मग, संप्रदाय अनुसार ॥५॥

---

* सरस्वतीभण्डार विद्या-विभाग कांकरोली हि० बन्ध सं० ५१ पु० सं० १ तथा सं० शु० बन्ध सं०१०५ पु० ८ से उद्धृत

सोमयाग तैलंग कुल, यज्ञनरायन रूप ।
तिनके गंगाधर भये, तिनके गनपति जूप ॥६॥
तिनके वल्लभभट्ट लखि, तिनके लच्मन मानि ।
उनके श्रीवल्लभ भये, अग्नि सुरूपहिं जानि ॥७॥
संवत पन्द्रह से बरस, पेंतीसा (१५३५) वैसाख ।
श्रीवल्लभ ससि ग्यासि कों प्रकट अंधेरे पाख ॥८॥

जन्म-पत्रिका—

छप्पयः-

पंद्रह से पेंतीस ग्यासि माधव वदि रवि ठिक * ।
रिच्छ धनिष्ठा सुभे करण बव लग्न सुवृश्चिक ॥
चौथे ससि भृगु केतु कुंभ में, पांचे बुध कहि ।
छठे अर्यमा मेष सातवें सनि वृष कों लहि ॥
नवें भौम गुरु कर्क लखि "जगतनंद" आनंद करन ।
श्रीवल्लभ प्रागट्य दिन देव जीव जग उद्धरन ॥९॥

---

* कां० स० भं० व० १०५ पु० ६ में प्राकट्य समय सं० १५३५ वैशाख वदी ११ रवौ धनिष्ठा नक्षत्र रात्रि प्रथम गतघड़ी ६-४४ समय श्री आचार्यजी को प्राकट्य । वरस ५२ मास २ दिन ७ सं १५८७ आषाढ़ सुद ३ तें दरसन दियो ।
विशेष—यह पुस्तक कल्याण भट्टजी और श्रीगोकुलनाथ जी के सम्वाद रूप में है और गोकुलनाथजी के किसी समकालीन सेवक द्वारा लिखी गई है ।

दोहा:-

प्रगटे श्रीआचार्यजी दीक्षित है हिय भक्ति ।
तिनके जेठे पुत्र हैं गोपीनाथजी व्याक्ति ॥१०॥
संवत पंद्रह सरसठा × द्वादसि वदि आसोज ।
जन्म श्रीगोपीनाथजी प्रफुलित वदन सरोज ॥११॥
तिनके पुरुषोत्तम भये सत्या कन्या = जानि ।
फिरि आगे पूरन भयो अब दूजे कों मानि ॥१२॥
श्रीवल्लभ सुत प्रगट अब जे श्रीविठ्ठलनाथ ।
गोस्वामी दीक्षित भये कृष्ण सरूप सुमाथ ॥१३॥
पंद्रह से संवत वन्यो और बहत्तरि जानि ।
भृगु नवमी वदि * पौष श्रीविठ्ठल जनम सुमानि ॥१४॥

जन्म-पत्रिका—

छप्पय:-

संवत पंद्रह सतहि नवमि भृगुवार बहत्तरि ।
पौष कृष्ण वृष लग्न हस्त शोभन तैतिल धरि ॥
दूजे गुरु कहि राहु तीसरे, पांचे ससि भनि ।
सातें भृगु सनि भौम, आठवें सूरज बुध गनि ॥

× कां०-सत्तरा = द्वा०-लक्ष्मी सत्या जानि ।
प्राचीन पुस्तकों में १५६७ ही मिलता है ।
* कां०-दिन पोष कों श्रीविट्ठल जनि मानि ॥

नवें केतु लखि मकर अब; "जगतनंद" आनंद भरि ।
दैवजीव उद्धरन कों वल्लभ-सुत विट्ठलेस हरि ॥१५॥

दोहा:-

सात पुत्र तिनके भये कन्या चारि सुहात ।
श्रीगिरिधर गोविन्दजी बालकृष्ण विख्यात ॥१६॥

जै श्रीगोकुलनाथजी श्रीरघुनाथ उदार ।
श्रीजदुनाथ कृपा करें श्रीघनस्याम अपार ॥१७॥

सोभा बेटी गुन भरी जमुना बेटी देखि ।
कमला बेटी लाडिली देवक्का उर लेखि ॥१८॥

पंद्रहसै सतानवा संवत कार्तिक देखि ।
मंगल सुदि की द्वादसी श्रीगिरधर जनु पोखि ॥१९॥

पंद्रहसै निन्यानवां कातिक वदि गुरुवार ।
सदा सुखद तिथि अष्टमी + श्रीगोविंदकुमार ॥२०॥

स० सोरहसै पांच वदि तेरसि मास जु क्वार ।
बालकृष्णजी जन्म दिन, "जगतनंद" ससिवार ॥२१॥

संवत सोरहसौ कह्यो अष्टा भृगुसुत वार ।
अगहन सुदि सातें जनम, गोकुलेस अवतार ॥२२॥

+ कां०-सप्तमी

जन्म-पत्रिका—

छप्पयः-

संवत सोरह सत जु आठ अगहन सुदि सातें ।
सुक्र पूरवांभाद्र सिद्धि इक घटिका रातें ॥
छप्पन पल गर लग्न मिथुन दूजे गुरु कहि सम ।
राहु तीसरें * भौम सुक्र सूरज लखि सपतम ॥
नवें चन्द्र सनि केतु लहि 'जगतनंद' गुरु-चरन चित ।
जगत जीव उद्धरन कों गोकुलेस प्रागट्य नित ॥२३॥

दोहाः-

संवत सोरह सै लख्यो ग्यारह बासर बुद्ध ।
कातिक सुदि की द्वादसी श्रीरघुनाथ प्रबुद्ध ॥२४॥
सोरह सै पंद्रह सरस चैत सुदी छठ बुद्ध ।
महाराजजी जन्मदिन आयुर्वाद विसुद्ध ॥२५॥
सोरह से संवत कह्यो सत्ताइस सनिवार ।
अगहन वदि तेरसि जनम श्रीघनस्याम उदार ॥२६॥

दश स्वरूप-वर्णन—

तिनके ठाकुर दस कहे करत चित्त दै सेव ।
आठ पहर तत्पर महा कोउ न पावै भेव ॥२७॥
श्रीगोवर्द्धननाथजी गोवर्द्धन गिरि लेत ।
देवदमन प्रकटित भए श्रीवल्लभ के हेत ॥२८॥

---

* द्वारकादासजी की पुस्तक का (छठें बुध) विशेषपाठ।

श्रीनवनीतप्रिय महा जै श्रीमथुरानाथ ।
नटवर श्रीविठ्ठलेसजी द्वारकेसजी साथ ॥२६॥
बालकृष्णजी देखिये श्रीनाथजी* सहाय ।
जै श्रीगोकुलचंद्र श्रीमदनमोहन सुख पाय ॥३०॥

स्वरूप का आगमन—

अत्रिम्मा इह नांउ है श्रीआचार्य की सासु ।
उनके गोकुलनाथजी पहिले आये पासु ॥३१॥
श्रीविठ्ठलेसुररायजी पाछें आये जानि ।
गिरि चरणाद्र के चौहटे स्वप्न दियो मन मानि ॥३२॥
ले आए आचार्य जी थापे निज गृह बीच ।
सेवा में तत्पर रहे महा भक्ति रस सींच ॥३३॥
माता श्रीआचार्य की इलम्मा तिहिं नाम ।
मदन सुमोहनजी तहां बैठे पाट सुधाम ॥३४॥
गज्जन खत्री धावना वास कालपी गांउ ।
पाए श्रीआचार्यजी नवनीतप्रिय नांउ ॥३५॥
करनावलि तट टूटि के प्रगटे मथुरानाथ ।
तिनको श्रीआचार्यजी पाट धरे निज हाथ ॥३६॥

---

* श्रीगोकुलनाथजी के घर के सेवक श्रीनाथजी को 'गोवर्द्धननाथजी' और श्रीगोकुलनाथजी को 'गोवर्द्धनधर' तथा 'श्रीनाथजी' शब्द से निर्दिष्ट करते है । अतः यहां श्रीनाथजी शब्द से गोकुलनाथजी समझना चाहिये ।

खत्री दामोदर लखे जाति सु संभलवार ।
न्हांते द्वारिकानाथजी बैठे पाट उदार ॥३७॥
महावन में श्री * बीच तें प्रगटे गोकुलचंद ।
नारायण ब्रह्मचारि कों सौंपे प्रभु सुखकंद ॥३८॥
गोस्वामी विठ्ठलेस के खेलन के हरि रूप ।
द्वारकेसजी संग हैं बालकृष्णजी भूप ॥३९॥
भंडारिन के सेव्य हैं श्रीनटवरजी राइ ।
असौकर्य ते राखियो श्रीमथुरेस सुहाइ ॥४०॥

स्वरूप- लच्छण—

दच्छिन कर कटि सों लग्यो, गिरिधर बांए हाथ ।
स्याम अंग छवि निरखिये, श्रीगोवर्द्धननाथ ॥४१॥
गौर बरन भुज जुगल है माखन दच्छिन पानि ।
शंख चक्र अंकित भुजा, नवनीत प्रियजानि ॥४२॥
स्याम बरन भुज चारि है, संख चक्र गद पद्म ।
जै श्रीमथुरानाथजी, भक्तन के सुखसद्म ॥४३॥
द्विभुज गौर माखन लियें, नृत्यत सुखानिधि लाल ।
पास रहें मथुरेस के, श्रीनटवरजी लाल ॥४४॥

---

* श्री= श्रीयमुनाजी= देखो ८३ वैष्णववार्ता 'महावन की क्षत्राणी' । कां०—पृथ्वी ।

गौर स्याम भुज जुग लगे निज कटि सों करि हेत।
श्रीविट्ठलेश्वर रायजी भक्तन कों सुख देत ॥४५॥
स्यामरूप चारों भुजा पद्म संख गद चक्र।
धरें द्वारिकानाथजी चितवन मोह्यो सक्र ॥४६॥
द्वि भुज गौर माखन लिये द्वारकेसजी संग।
सोमित अति हि अगाध × छवि बालकृष्णजी रंग ॥४७॥
गौर चतुर्भुज द्वै भुजा मुरली अधरन साथ।
इक कर कटि इक गिरि धरें जै श्रीगोकुलनाथ ॥४८॥
स्याम द्विभुज मुरली धरें "जगतनन्द" सुखकन्द।
ललित...लटक मटकन वदन, जै श्रीगोकुलचन्द ॥४९॥
गौर अंग छवि द्वि भुज लखि मुरली धरें सु छन्द।
मदन सुमोहनजी सरस कहि यों कवि "जगनन्द" ॥५०॥
सेवि पदारथ देखि दस, गोस्वामी-कुल-लाल।
सेवा करें प्रणाम करि "जगतनंद" नइ माल ॥५१॥
सात गुसांई दस प्रभू, सेवत चित्त लगाइ।
तिन कौ कुल विस्तार अति, श्रीगोकुल सरसाइ ॥५२॥

स्वरूपन को बांट श्रीगुसांईजी करि दीने (सो वर्णन):

गोस्वामी विट्ठलेसजू बांटि दिये सुत सात।

× कॉं०-अति अति अंग छवि।

श्रीगोवर्द्धननाथजी* सब मिलि सेवत प्रात ॥५३॥
नवनीतप्रिय सबन के हुते बांट में जानि ।
गिरिधर दाऊ कों दिये सब मिलि कीनी कानि ॥५४॥
गिरिधरजी के बांट में श्रीमथुरेस गुपाल ।
श्रीविट्ठलेसुररायजी गोविन्दजी प्रतिपाल ॥५५॥
बालकृष्णजी को दिये द्वारकेसजू रूप× ।
गोकुलेसजी बांट में गोकुलनाथ अनूप= ॥५६॥
दीने श्रीरघुनाथकों सुखनिधि+ गोकुलचन्द ।
महाराजजी बांट में बालकृष्ण सुखकन्द ॥५७॥
महाराज लीने नहीं तब श्रीविठ्ठलनाथ ।
बालकृष्णजी ता समै सोंपे गिरिधर हाथ ॥५८॥
बालकृष्ण जी आनि के मांगे गिरिधर आस ।
पलना झूले मन इहै द्वारकेसजी पास ॥५९॥

---

*श्री गोवर्द्धननाथ जी के प्राकट्यादि सम्बन्ध में (स० भं० हि० बन्ध-१०५ पु० ६)

(क) गोवर्द्धन से प्राकट्यः-सं० १४६६ श्रावण वदी ३।

(ख) आचार्यजी के सेवक पूरणमल्ल द्वारा मंदिर निर्माण सं० १५५६ आ० शु० ३ प्रारम्भ। शिखर समाप्ति पूर्व ही देहावसान आचार्य द्वारा पुनः सम्पूर्ति।

(ग) मंदिर में विराजना सं० १५७६ वैशाख शु० ३

(घ) श्रीगुसांइजी ने गोकुलनाथजी द्वारा मणिकोठा निर्माण कराया सं० १६३०।

× द्वा०-कृपाल। = द्वा०-अनूप।

+ कां०-जै श्रीगोकुलचंद

तब गिरिधरजी यों कहे बालकृष्णजी लेहु ।
ठाकुर ये महाराज के जब मांगें तब देहु× ॥६०॥
महाप्रभू के पादुका बालकृष्णजी संग ।
लै आये पधराइ के बालकृष्णजी रंग ॥६१॥
गिरिधरजी के पुत्र हैं दामोदरजी नाम ।
तिनकों श्रीनवनीतप्रिय सोंपे अपुने धाम ॥६२॥
दूजे गोपीनाथजी सेवा नटवर साथ ।
सोंपे मथुरानाथजी श्रीगिरिधर निज हाथ ॥६३॥
जै जै श्रीघनस्याम कों गोस्वामी विट्ठलेस ।
मदन सुमोहनजी दिये उनके बांट विसेष ॥६४॥
इहि विधि बांटे सुतन कों श्रीविट्ठल निज हाथ* ।
सातों सुत के बांट में श्रीगोवर्द्धननाथ ॥

वंशावली:–

प्रथम पुत्र श्रीगिरिधरजी को

अब इनकी वंसावली सुनों भक्त सु
या मग के सुख देन कों कह्यो सु

×कां०–की प्रति में यह दोहा प्रतीत होता है ।

*श्रीगुसाईंजी का तिरोधान (स० मं० हि० वन्ध १०५ पु० ६)

गिरिधर जी के तीन सुत कन्या तीन निहारि ।
मुरलीधर दामोदर जु गोपीनाथ विचारि ॥६७॥
महालक्ष्मी बेणी तथा श्रीरुकमिनी जानि ।
दाऊजी के बंस कों 'नंद' जु कहत बखानि ॥६८॥
दाऊजी के एक सुत बडे श्रीविठ्ठलराय ।
तिन के सुत हैं चारि श्रीगिरधारी दृढ़काय ॥६९॥
श्रीगोविंद दीक्षत भये बालकृष्ण सुख खानि ।
श्रीवल्लभजी अति सरस, सदा धर्म की बानि ॥७०॥
गिरिधारी के एक सुत दामोदरजी मानि ।
दाऊजी के द्वै तनय विठ्ठलराय बखानि ॥७१॥
गिरिधारी दूजे कहों सेवत श्रीविट्ठलेस ।
पुत्र जु विठ्ठलराय के श्रीगोवर्द्धन भेस ॥७२॥
दूजे श्रीगोविंदजी खेलत अद्भुत ख्याल ।
बालकृष्ण जी तीसरे हंसते दृगन विसाल ॥७३॥
गिरिधारी के पुत्र हैं श्रीरघुनाथ प्रमान ।
चिम्मनजी कल्याणजी दूजे तीजे जानि ॥७४॥
चौथे श्रीघनस्यामजी पांचे गोपीनाथ ।
गोविंदजी के एक सुत श्रीमोहनजी साथ ॥७५॥
मोहनजी के पुत्र हैं श्रीगोविन्दजी नाम ।
बाबाजी क्रीड़ा करें सुखकर आठों जाम ॥७६॥

दामोदर के दोइ सुत विठ्ठलराइ सुलाल ।
अरु मुरलीधर देखिये भक्तन के प्रतिपाल ॥९७॥
सुत हैं मथुरानाथ के व्रजआभूखन लाल ।
दूजे श्रीव्रजराजजी सुख-निधान गुन-जाल ॥९८॥
पुत्र द्वारिकानाथ के प्यारे श्रीरणछोड़ ।
दूजे गिरिधरजी लखौ काम न इनके जोड़ ॥९९॥
बाबूजी के दोइ सुत श्रीगोवर्धन ईस ।
अरु इट्टूजी कहत हैं नाम गोकुलाधीस ॥१००॥
गोवर्धनेस के पुत्र हैं श्रीवल्लभ अनिरुद्ध ।
बंसीधरजी सोहने खेलत महा प्रबुद्ध ॥१०१॥
पुत्र गोकुलाधीस के रामकृष्णजी बाल ।
अरु लछमनजी देखिये सोमित नैन विसाल ॥१०२॥
रामकृष्ण के तीन सुत दीछित राजिवनैन ।
जगन्नाथ रंगनाथजी भक्तन कों सुख दैन ॥१०३॥
जगन्नाथ के पुत्र हैं श्रीगिरिधारी लाल ।
व्रजाभरणजी देखिये माधवजी प्रतिपाल ॥१०४॥
माधवजी के पुत्र हैं कल्याणराइ सुखदानि ।
'जगतनन्द' बरनन करत मन में आनन्द मानि ॥१०५॥
रंगनाथ के पुत्र हैं सोमित श्री यदुनाथ ।
अरु लखिये व्रजरत्नजी श्रीकृष्णजी सुसाथ ॥१०६॥

जट्टजी के पुत्र हैं व्रजाधीसजी आइ ।
दूजे श्रीप्रद्युम्नजी तीजे वृजपति राइ ॥१०७॥
सब सेवत श्रीनाथजी निज कुल के अवतंस ।
'जगतनंद' बरनन कियो गिरिधरजी को वंस ॥१०८॥

द्वितीय पुत्र श्रीगोविंदजी का वंश--

पुत्र दूसरे कौ सुनो गोविन्दजी- सन्तान ।
चारि पुत्र इनके भये श्रीकल्याण प्रमान ॥१०९॥
अरु लक्ष्मीनरसिंहजी श्रीकृष्णजी सुलाल ।
गोकुल उत्सवजी सदा हंसते दगन विसाल ॥११०॥
कल्याणराइ के दोइ सुत जेठे श्रीहरिराइ ।
छोटे श्रीगोपेशजी विद्यानिधि जुग माइ ॥१११॥
सुत लक्ष्मीनरसिंह के तीन लखो मन मांह ।
अच्युतराइ जु लालमनि गोकुलेन्द्र दृढ़ चांह ॥११२॥
पुत्र तीन श्रीकृष्ण के गोकुलअालंकार ।
माधव गोवर्द्धन लखे करत जीव-उद्धार ॥११३॥
अलंकार के दोइ सुत व्रजेसुर श्रीहरिराज ।
व्रजेसुर जी के एक सुत अलंकार जी राज । ११४॥
गुन निधान दाता चतुर माधवजी सुखरास ।
तिनके सुत हैं कृष्णजी सदा कृष्ण के पास ॥११५॥

गोकुलेन्द्र सुत एक हैं व्रजानन्द परसंस ।
'जगतनन्द' बरनन कियो गोविन्दजी कौ वंस ॥११६॥

तृतीय पुत्र श्रीबालकृष्णजी का वंश—

अब कहि हों सुत तीसरे बालकृष्ण जी वंस ।
इनके देखो पुत्र छह इक कन्या अवतंस ॥११७॥

द्वारकेस वृजनाथजी व्रजभूषणजी लाल ।
पीतांबरजी कामतनु अलकारजी बाल ॥११८॥

इक सुत पुरुषोत्तमजी भये, द्वारकेस-सुत दोय ।
जे श्रीगिरिधर लालजी श्रीअनिरुद्ध सु होय ॥११९॥

इक सुत गिरिधर लाल के देखि द्वारिकानाथ ।
एक पुत्र व्रजनाथ के कृष्णचन्द्र सुभ गाथ ॥१२०॥

वृजभूषण के एक सुत सुखनिधि श्रीगोपाल ।
उनके वल्लभजी भये तिनके हैं द्वै लाल ॥१२१॥

व्रजभूषण गोपालजी विद्या-निधि सुख-खानि ।
व्रजभूषण के एक सुत गिरिधरलाल बखानि ॥१२२॥

पुत्र जु गिरिधरलाल के व्रजभूषणजी नाम ।
दूजे श्रीवल्लभ लखौ चिरंजीओ निज धाम ॥१२३॥

पीताम्बर के दोइ सुत स्यामल यदुपति लाल ।
स्यामलजी के दोइ सुत व्रजराजा व्रजपाल ॥१२४॥

यदुपतिजी के एक सुत पीताम्बरजी मानि ।
पीतांबर के एक सुत श्रीपुरुषोत्तम जानि ॥१२५।
अलंकार के दोइ सुत गोकुलेस विट्ठलेस ।
विट्ठलेस के चारि सुत श्रीवल्लभ राकेस ॥१२६॥
श्रीरणछोड़ सुहावने मुरलीधरजी देखि ।
अलंकारजी चारि ये गुनगन जहां अलेखि ॥१२७॥
वल्लभजी के तीन सुत बालकृष्णजी साथ ।
विंकटेसजी दूसरे तीजे तिरुमलनाथ ॥१२८॥
पुत्र एक रणछोड़ के प्यारे श्रीअनिरुद्ध ।
मुरलीधर के दोइ सुत श्रीपुरुषोत्तम सुद्ध ॥१२९॥
अरु पीताम्बरजी महा भक्तन करत निहाल ।
पुरुषोत्तम के पुत्र हैं श्रीगोवर्द्धनलाल ॥१३०॥
पुत्र व्रजालंकार के श्रीव्रजजीवन जानि ।
दूजे आनन्द देत हैं श्रीव्रजवल्लभ मानि ॥१३१॥
या कुल के सब ही सरस अघ को करें विध्वस ।
'जगतनंद' बरनन कियो बालकृष्णजी वंस ॥१३२॥

चतुर्थ पुत्र श्रीगोकुलनाथजी का वंश—*

अब सुनिये चित लाइके चौथे सुत कौ वंस ।
गोकुलेस सब तें सरस, निज कुल के अवतंस ॥१३३॥
जै श्रीगोकुलनाथजी तिनके द्वै सुत लाइ ।
द्वै कन्या, गोपालजी छोटे विट्ठलराइ ॥१३४॥

* इस वंश के प्रत्येक वंशधर का जन्मकाल दिया गया है अतः यह निश्चित है कि कवि इस वंश(घर) का ही सेवक

इक सुत विठ्ठलराइ के श्रीगोवर्धन ईस* ।
तिनके द्वै सुत निरखिये व्रजपति व्रजआधीस ॥१३५॥
सोरह सै तेंतालिसा चौदसि बदि में पोह ।
श्रीगोपालजी जन्म दिन गोकुलेस सुख सोह ॥१३६॥
संवत सोरह सै विसद पैंतालिस आदित्य ।
फागुन बदि तेरसि जनम विठ्ठलराइ सुनित्य ॥१३७॥
सोरह सै संवत रविज और तिहत्तर दीस ।
भादों बदि सातें जनम श्रीगोवर्धन ईस ॥१३८॥
सोरह सै जु तिरानवा कातिक बदि राकेस ।
सातें को लीनो जनम श्रीव्रजपति सुभ भेस ॥१३९॥
सोरहसै सत्तानवा अगहन सुदि रजनीस ।
पूरनमासी जन्म दिन जय श्रीव्रजआधीस ॥१४०॥
गोकुलेसजी कृष्णजी इनमें अन्तर नाहि ।
एक रूप जे निरखहीं ते बहु खाहिं अघांहि ॥१४१॥
गुन-निधान दाता चतुर सलिरूप अवतस ।
'जगतनन्द' बरनन कियो गोकुलसजी वस ॥१४२॥

पंचम पुत्र श्रीरघुनाथजी का वंश--

पांचे श्रीरघुनाथजी तिनकौ वंस विसाल ।
चारि पुत्र सुखरूप हैं इक कन्या प्रतिपाल ॥१४३॥

---

* प्रारम्भ में जिन श्रीगोवर्द्धनेशजी का नाम लिखा गया है वे चिन्हित श्रीविट्ठलरायजी के पुत्र ही कवि के गुरु हैं ।

देवकीनन्दनजी लखो श्रीगोपाल सुभ माथ ।
और कहों जयदेवजी भये द्वारिकानाथ ॥१४४॥
देवकीनन्दन के भये तीन पुत्र अभिराम ।
कहिये श्रीरघुनाथजी लछमन वल्लभ काम ॥१४५॥
पुत्र एक रघुनाथ के देवकीनन्दन नाउँ ।
लछमनजी के एक सुत चिम्मालाल सुठाउं ॥१४६॥
वल्लभजी के तीन सुत जै श्रीगोकुलनाथ ।
विठ्ठलेस जयदेवजी हरि-सेवा निज हाथ ॥१४७॥
विठ्ठलेस के दोइ सुत गिरिधर वल्लभलाल ।
गिरिधरजी के एक सुत द्वारिकानाथ रसाल ॥१४८॥
एक पुत्र जयदेव के जै श्रीगोकुलचन्द ।
विद्यायुत जसवंत हैं कहियो कवि 'जगनन्द' ॥१४९॥
श्रीगोपाल के एक सुत गोपइन्द्रजी नाम ।
पुत्र द्वारिकानाथ कें गोकुलचन्द सुधाम ॥१५०॥
इक सुत गोकुलचंद के श्रीरघुनाथ उदार ।
वंस सिरी रघुनाथ को बरन्यो बुधि अनुसार ॥१५१॥

षष्ठ पुत्र श्रीयदुनाथजी का वंश—

छठे पुत्र महाराजजी तिनके सुत छह देखि ।
इक कन्या हिय जानियो श्रीमधुसूदन लेखि ॥१५२॥
गोपीनाथ जगनाथजी रामचन्द्रजीलाल ।
बालकृष्णजी देखिये बालमुकुन्द रसाल ॥१५३॥

मधुसूदन के चारि सुत प्रद्युमनजी सुखजाल ।
मुरलीरधजी सुखकरन विट्ठलराइ विसाल ॥१५४॥

मणिजी ये मिलि चारि हैं प्रद्युम्मनि के सुत दोइ।
जै श्रीद्वारिकानाथजी विट्ठलनाथ सुहोइ ॥१५५॥

पुत्र जु विट्ठलनाथ के चिरजीवो सुखरूप ।
नाउ धरयो प्रद्युम्नजी अरु मधुसुदन भूप ॥१५६॥

मुरलीधर के एक सुत श्रीवल्लभजी लाल ।
इक सुत विट्ठलराय के गोकुलमणि प्रतिपाल ॥१५७॥

मणिजी के सुत चारि हैं जै श्रीमाधवराइ ।
पुरुषोत्तमजी भक्त-हित कल्याणराइ हरिराइ ॥१५८॥

कल्याणराइ के तीन सुत गिरधरजी व्रजपाल ।
अरु मोहनजी कहत हैं 'जगतनंद' नइ माल ॥१५९॥

गोपीनाथ के दोइ सुत लखे प्रानमनि लाल ।
अरु दूजे गोपालमणि सुखनिधान गुन-जाल ॥१६०॥

जै जै श्रीयदुनाथजी करत रोग - विध्वंस ।
'जगतनंद' बरनन कियो महाराजजी बंस ॥१६१॥

सप्तम पुत्र श्रीघनश्यामजी का वंश—

पुत्र सातवें सुखकरन जै जै श्रीघनस्याम ।
तिनके एकै पुत्र हैं श्रीगोपीस सुधाम ॥१६२॥

चारि पुत्र गोपीस के श्रीउपेन्द्र सुखरूप ।
देखे राइ गुपालजी अरु श्रीकंत सुभूप ॥१६३॥
चौथे हैं श्रीरमनजी इक सुत तिनके बाल ।
काम सरूप लखे महा श्रीव्रज-उत्सवलाल ॥१६४॥
व्रजउत्सव के देखिये श्रीव्रजरमन विचारि ।
जै जै श्रीघनस्याम कौ वंस कह्यो उर धारि ॥१६५॥

उपसंहार—

श्रीवल्लभ कुल बरनियो 'जगतनंद' चितु लाइ ।
जितने बालक जा घरहिं ते अब कहत सुनाइ ॥१६६॥
गिरिधरजी के बंस में मुकत भये उनतीस ।
सबै एकसौ नव लखे अस्सी अब तो दीस ॥१६७॥
गोविन्दजी के बंस में सोरह बालक लाल ।
सबै परोच्छ विराजहीं भक्तन के प्रतिपाल ॥१६८॥
बालकृष्णजी बंस में मुकत जु अट्ठाईस ।
ग्यारह बालक चिर जियो सब मिलि उनतालीस ॥१६९॥
गोकुलेस के बंस में पांच बाल हिय सांच ।
सबै परोच्छ विराजहीं नहिं मोह की आंच ॥१७०॥
बंस सिरी रघुनाथ के सबै बीस मन लीन ।
सतरह भये परोच्छ हैं विद्यमान हैं तीन ॥१७१॥
महाराज के बंस में सब बालक चौबीस ।
अष्टादस गोलोक निज, छह जीवो मम सीस ॥१७२॥

घनस्यामजी बंस में सब बालक हैं सात।
तिनमें पांच परोच्छ हैं द्वै चिरजीवहु गात ॥१७३॥
संवत सतरह से सुखद इक्यासी बदि पोह।
नवमी उत्सव लों कहे इतने बालक जोह ॥१७४॥
सातों घर के लाल सब दो सै ऊपर बीस।
एक,एक,सौ(१०२)चिराजियें इकसत मुक्त उन्नीस× ।१७५।
लाल एकसौ दोई विद्यमान है नित्त।
'जगतनंद' विनती करत इनसों लागौ चित्त ॥१७६॥
भए, होंहिगे, हैं अबै जे बालक अवतार।
दैवी जीव उद्धार कों इह लीला विस्तार ॥१७७॥
स्रवन किए तें होत फल दरस किये कौ आज।
दोसै लाल इकईस कौ नीके बन्यो समाज ॥१७८॥
सब बालक के नाम सुनि दरसन को फल होइ।
सदा ध्यान इनकौ रहौ 'जगतनंद' रस भोइ ॥१७९॥
मन दृढ़ ह्वै है पुष्टिमत निज मारग की रीति।
श्रीवल्लभ - विट्ठल - कृपा पावै श्रीजी - प्रीति ॥१८०॥
सुनै सुनावै निति प्रति पढै पढावै नाम।
भक्ति मुक्ति धन पुत्र बहु ह्वै हैं पूरन काम ॥१८१॥
पढ़ि हैं सुनि हैं चित दै ताके मंगल गेहु।
'श्रीवल्लभ-वंसावली' 'जगतनंद' सुनि लेहु ॥१८२॥

× योग में ११८ आता है।

श्रीवल्लभ विठ्ठल प्रभू गोकुलेशजी आस ।
श्रीगोवर्द्धन ईस कौ 'जगतनंद' है दास ॥१८३॥
संवत सत्रह सै बन्यो इक्यीसा (१७८१) बदि माह ।
द्वैज चन्द पोथी लिखी 'जगतनंद' करि चाह ॥१८४॥

इतिश्री जगतानन्द विरचिता श्रीवल्लभवंशावली
समाप्ता ।

सं०	वंश कर्ता	लीलास्थ वंशज	सं. १७८१ तक विद्यमान वंशज	एकत्र वंशज
१	श्री गिरिधर जी	२६	८०	१०६
२	श्री गोविन्द जी	१६	—	१६
३	श्री बालकृष्णजी	२८	११	३६
४	श्री गोकुलनाथजी	५	—	५
५	श्री रघुनाथ जी	१७	३	२०
६	श्री यदुनाथ जी	१८	६	२४
७	श्री घनश्यामजी	५	२	७
		११८	१०२	२२०

संवत १७८१ पौष वदी ६ पर्यन्त सात बालकों के वंशज।

वक्तव्य—

"श्री गुसांइजी की वन यात्रा" की हमें कोई प्राचीन प्रति उपलब्ध नहीं हो सकी है। प्रस्तुत ग्रन्थ श्रीद्वारिकादासजी परिख कांकरोली के संकलन में विद्यमान प्रतिलिपि के आधार पर दिया जा रहा है। जिसका मूल आधार ब्रज में विद्यमान कोई प्राचीन प्रति थी।

स० भं० कांकरोली विद्याविभाग में हि० वन्ध ८६ पु० सं० ३ गद्य में एक व्रज यात्रा की प्रति उपलब्ध होती है प्रूफ संशोधन के समय उसका पाठ मिलाते हुए आश्चर्य हुआ कि प्रस्तुत पद्य ग्रन्थ (जगतानन्द कृत) एवं उक्त गद्य का वर्णन पूर्णतया समान है। उक्त पु० सं० ३ का लेखन समय प्राप्त नहीं है फिर भी पुस्तक प्राचीन प्रतीत होती है।

प्रस्तुत पद्य ग्रन्थ का उसे गद्यात्मक अनुवाद यद्यपि समझा जा सकता है पर पुस्तक के प्रारम्भ में दिया हुआ विभिन्न संवत् इसका एक ओर से खण्डन करता है- दूसरी ओर सर्वथा समान वर्णन शैली उसमें वर्णित व्यवहार इसका समर्थन करता है।

श्री गुसाईं जी की अन्य यात्राओं में स्थान का क्रम एक समान ही रहने की सम्भावना की जा सकती है पर दोनों विभिन्न ग्रन्थों में वर्णित निवास, भोजन, शयन, आदि क्रियाओं के लिये एक ही समान स्थानों का एक ही तिथि में उल्लेख किया जाना आश्चर्य प्रद है। प्रस्तुत गद्य ग्रन्थ का प्रारम्भिक अंश इस प्रकार है:—

"संवत् १६२८ फागुन वदि ७ श्री गोकुलवास कीधो तदुपरॉत एक समे भाद्रवा वदि १२ शेन आर्ती उपरान्त श्री गुसाइजी प्रियपुत्र श्रीमद्गोकुलनाथ जी कों संग लेकें संमर्द के संकोच तें कोउ न जानें मथुरा पधारे रात्रि मथुरा जाय रहे"।

उक्त उल्लेख से जहां इस यात्रा का समय सं० १६२८ के अनन्तर आता है, वहाँ 'जगतानन्द' कृत वर्णन दोहा सं० ३ में सं० १६२४ उपगत होता है।

यह प्रश्न विचारणीय है, अस्तु। पद्य ग्रन्थ के प्रूफ सशो-धन के लिये उक्त गद्य ग्रन्थ परम सहायक सिद्ध हुआ है इसी लिये यहां अप्रासंगिक होते हुए भी इतना प्रासंगिक विवेचन किया गया है।

—सम्पादक

ग्रंथाङ्क-२

श्रीगुसांईजी की वनयात्रा

श्रीगोवर्द्धन ईस के चरनन करि दंडोत।
चित लगाइ सुख पाइ के कहि 'जगनंद' उदोत ॥ १ ॥
गोस्वामी विट्ठलेशजू दैवी जीव उद्धारि।
कीने हैं बनजातरा भक्त संग सुखकारि ॥ २ ॥
सोरह सै संवत वन्यो चौवीसा (१६२४) ससि वार।
भादों वदि की द्वादसी वन कौ कियो विचार ॥ ३ ॥
द्रव्य स्थल भंडार कौ देखि आइ संकोच।
वातें सेतज आरति पाछे चले(सु)रोच (१) ॥ ४ ॥
श्रीगोकुल तें विजय किय, श्रीमथुरा रहि रात।
प्रात भई (सु) त्रयोदशी न्हाये श्रीविश्रांत ॥ ५ ॥
चौबे उजागर वचन लै राखी नेम मर्याद।
पाछें विधि पूर्वक कियो करि संकल्प अनाद ॥ ६ ॥
आरंभ ते विसरांत तें जन्मस्थल पग धारि।
चौबे बोल्यो–'पहेले ही भूतेसुर सुखकारि' ॥ ७ ॥
चौबे सू श्रीजू कहे 'भूतेसुर सुखरूप'।
इहां ही तें भलो मानिये दिव्य दृष्टि के भूप ॥ ८ ॥

पाछें बोल्यो यों कह्यो - 'मैं आऊँ तुम साथ'।
'काम तुमारो एक है - यों कहि' विठ्ठलनाथ ।. ९ ॥
'वचन तुम्हारो लेन हो सो लीनो हम आज'।
यों कहि चौबे की बिदा करी आप महाराज ॥१०॥
पाछे पांव उद्दावने मधुवन प्रथम पधारि ।
तहां जु कुंड में स्नान करि राइ कल्याण निहारि ॥११॥
पाछे आए तालबन संग समाज विसाल ।
न्हाइ कुंड दरसन कियो प्रभु बिहारीलाल ॥१२॥
फिरि जु पधोरे कुमुदबन न्हाइ कुंड हरि रूप ।
दरसे गोपीनाथजू श्रीकल्याण अनूप ॥१३॥
और चतुर्भुज राइजू दरस फिरे महाराज ।
मधुवन कीने पाकविधि राजत हैं सुख साज ॥१४॥
पाछें चौदस के दिना,आये संतनु कुंड ।
राजा संतनु देखि थल दरसे सूरज कुंड ॥१५॥
फिरि आये 'गंधेसरा' न्हाये कुंड गांधर्व ।
आप पधारे बहुलवन पूजे बहुला सर्व ॥१६॥
पाछे न्हाइ गोदान करि दरसे मोहनराइ ।
पाछें 'आरठ' पांव धरि स्नान किये बहु भाइ ॥१७॥
कुंडजू राधाकृष्ण के दरसन राधाकृष्ण ।
पास पधारे स्याम बट आनंद भरे सुतृष्ण ॥१८॥
आरोगे 'पकवान' कों कुसुमोखर करि न्हान ।
न्हाये नारद कुंड में गोधन किये पय पान ॥१९॥

द्वार पधारे (श्री) नाथजी दरस लिये परसाद ।
रात रहे भक्तन सहित अद्भुत लीने स्वाद ॥२०॥

अमावस के दिन न्हाइ के सेवा करि विठ्ठलेश ।
आरम्भे दिस दाहिनी तहां पधारे भेस ॥२१॥

दरसे श्रीहरदेवजी देख्यो तीरथ चक्र ।
न्हाइ गंगा मानसी ब्रह्मकुंड ज्यों सक्र ॥२२॥

दरसे केसोरायजी दानी राइ निहारि ।
कुंड संकरषन न्हाइ के गोविंद कुंड पखारि ॥२३॥

न्हाइ कुंड गांधर्व में दरसे गोविंदराइ ।
कुंड अपछरा न्हाइ करि रूद्र कुंड में न्हाइ ॥२४॥

आपु पधारे प्रीतसों निज मंदिर में न्हाइ ।
लै प्रसाद वा रात्रि कों बसे गांठोली जाइ ॥२५॥

भादों सुदी प्रतिपदा पिछली रात्रि घटिका चार ।
तब उठिकें परमंदरे होइ जू सऊधवारि ॥२६॥

फेरि पवाई छांडि के बांही दिस चालि जात ।
परवत दाहिनो छोड़िके जगतनंद विख्यात ॥२७॥

आदि बद्री निरखि के और हिंदोला देखि ।
फिरि इद्रोली आइ के इन्दु कुंड जल पेखि ॥२८॥

परसि, हाथियो दाहिने देइ पधारे आप ।
देखे प्रभुजी कामवन सेवक संत सुख थाप ॥२९॥

चंद्रसेन कायस्थ हुते आये दर्सन काज* ।
धर्म कुण्ड डेरा कियो करि भोजन सुख साज ॥३०॥
भादों सुदि की दूज को धर्म कुंड में न्हाइ ।
कामे की प्रदच्छिणा कीने अति सुख पाइ ॥३१॥
विमल कुंड करि वंदना कुंड कामना देखि ।
महोदधि रतनाकरहि सेतुबंध सब पेखि ॥३२॥
कालाखि आंख मिचोनी आपु पधारे घोख ।
अंध कूप वट भीतरें सुरभी गुफा विलोक ॥३३॥
सिला खिसलनी देखि कें थार कटोरी चीन्ह ।
चौरासी यहां कुंड हैं स्नान वन्दना कीन्ह ॥३४॥
पाछें डेरा आइ के दर्शन किये घर नंद ।
द्विज भोजन करवाय कें भोजन किये सुछंद ॥३५॥
रहे रात, उठि प्रातकों भादों सुद का तीज ।
भक्त साथ सब लेइ कें जगतनद सुख बीज ॥३६॥
देखि सुनेहरा चालि जहां टेर देंहि हरि झुण्ड ।
तहीं बिलोकि आदेर को न्हाइ देह के कुण्ड ॥३७॥
श्री बलदेव या ठौर पै अरु रेवती दरसाई ।
पाछें श्रीवृषभानपुर आये चित्त लगाइ ॥३८॥
भानोखर को देखि के कुंड दोहनी न्हाइ ।
परवत सांकरी खोरि कों बिच होई चालि जाइ ॥३९॥

---

* ये तत्सामयिक प्रसिद्ध राजकीय कर्मचारी (पुरुष) थे ।

चिकसोली व्हे भानपुर मान दान गढ़ होई।
दरसि दानघाटी चढ़े भगवद् रूप ही जोइ ॥४०॥
रतनकुंड को परस तनु नौमारी चौबार।
पीरी पोखर देखि के कुंडल नवघर धार ॥४१॥
संकेत पधारे आपु तत्र बैठे आइ संकेत।
रास चोंतरा देखि के तहां विराजे हेत ॥४२॥
विधुला कुंड जु कृष्ण को तहाँ न्हाय प्रभु आय।
जसोदा नद जु सबन कों लखि नंदीस्वर जायं ॥४३।
मधुवन कुंड जु कृष्ण को कुंड जसोदा न्हाइ।
नंद जसोदा राम अरु कृष्ण रूप दरसाय ॥४४॥
पाछें ललिता कुंड को बजवरी छछहारि .. ।
कुंड देखि दामोदरा गोपेस्वर पग धारि ॥४५॥
उतरे हैं अक्रूर जहां ता थल कों लखि एन।
पाछे पोखर ईसरा दोखि चल सुख लैन ॥४६॥
वैरागी क्यारी जहां उद्धव गोपिन ज्ञान।
सो थल देखे कुंड फिरि मधुसूदन दरशान ॥४७।
जलबिहारि खडी कदम होय · पग पाथ।
पान सरोवर पाक करि भोजन करि निज हाथ ॥४८॥
पाछे आये खिदरवन तहां घसे वा राति।
भादों सुदी की चौथ को आगे चले प्रभाति ॥४९॥
न्हाये नाना कुंड में परिक्रमा करि आइ।
नागवल्ली को दान करि फेरि पिसोरा धाइ ॥५०॥

होय करहेला तें फिरे तब आये अंजनोख ।
मैया ठाकुर नैन में अंजन दीनो तोख ॥ ५१ ॥
नौतन कल्पित रास स्थल फिरि जमुना तजि साथ ।
श्रीजसुमति पीहर जहां तहां पधारे नाथ ॥ ५२ ॥
जिहीं ठौर मोती उपजे सोइ मुखारी ताल ।
देखि चले जु विलास वट तहां पछो नहीं चाल ॥ ५२ ॥
पाछे गये बेठन कों जसोदा - नंदन आइ ।
उठे जु देखन गाइ कुं तहां पधारे चाइ ॥ ५४ ॥
परसि कुन्ड बलभद्र को चरन पहाड़ी आइ ।
संख चूड़ बध देखि थल वांइ देइ अधिसाइ ॥ ५५ ॥
आप पधारे वच्छवन खेई जाको नांउ ।
अलीखान एक गोरवा * वाछि ले जात सुठाउं ॥ ५६ ॥
सन्मुख आइ आदर दियो थारी गही ले चैन ।
भक्त मंडली सहित प्रभु करि भोजन बसे रैन ॥ ५७ ॥
भादों सुदी की पंचमी सोइ सुन तू प्रात ।
रासोली बटवच्छ कोन नैरुत छोड़े जात ॥ ५८ ॥
भूमि गाम ईसान दिसि पांउ धारे नदघाट ।
खिद्रन बनमें होइ के रामघाट लखि पाट ॥ ५९ ॥

---

* इस समय (सं० १६२४) अलीखान की विद्यमानता और उनकी पूर्व जाति का परिचय होता है।

जमुना खेंचे आय चलि अच्चैवट तिहिं ठौर ।
पकरे जहां प्रलम्ब को श्रीबल लिये सु ओर ॥ ६० ॥
कात्यायनी थल देखि के चीरघाट लखि नाथ ।
नन्द घाट जमुना उतरि चले भक्त ले साथ ॥ ६१ ॥
देखि भद्रवन कुन्ड को मधुसुदन में न्हाइ ।
पाव धरि भाडीर वन गाम खिजोली जाइ ॥ ६२ ॥
सक्र सोति भंडीर को कूप लख्यो बट देखि ।
परिक्रमा, भोजन किये रहे बेलवन पेखि ॥ ६३ ॥
भादों सुदि की छठ को उठे जु पिछली रात ।
श्रीजमुनाजु स्नान करि सूर्य उदय चलि जात ॥ ६४ ॥
मानसरोवर होय के मानिक सिला निहारि ।
पिपरोली बट रास थल देखि पधारे दारि (?) ॥ ६५ ॥
जे सारस्वत कल्प में केह रहे छल छांड़ि ।
फिरि बछरोंडी बध बंधवा वाकइ सो को तांडि ॥ ६६ ॥
आपु पधारे लोहवन फिरि घाट अखंड ।
तहां न्हाइ वंदन करे जमुला अर्जुन चंड ॥ ६७ ॥
दरसे मथुरानाथजी नंदकूप लखि रूप ।
मंदिर श्याम जु रोहिनी सप्त समुद्र सुकूप ॥ ६८ ॥
आये घाट उतरेसजू श्रीजमुनाजी न्हाइ ।
श्रीगोकुल पधारे चरन करि भोजन सुख पाइ ॥ ६९ ॥

मथुरा पधारे राति कों आपु रहे चित लाइ ।
प्रात गये सु वृंदावनें दसासुमेधी घाट ॥ ७० ॥
भादों सुदि की सप्तमी गये थान अक्रूर ।
तहां देखि भतरोड कुं कालीदह को पूर ॥ ७१ ॥
ह्वै त्रिस्कन्ध उचाय मदन सु मोहन पेखि ।
चीरघाट बसीवट जु धर्म कुंड कों देखि । ७२ ॥
वेनु कूप कों दर्स करि देखे जु गोविन्द देव ।
फिरि मथुरा में आइके अछिद्रसुर सेव ॥ ७३ ॥
बन सब संपूरन करे फिरि श्रीगोकुल आय ।
दिन ग्यारह चौबीस बन कीने विठ्ठलराय ॥ ७४ ॥
गोस्वामी विठ्ठलेशजी इह विधि करि सुखकन्द ।
भक्त सहित बनजातरा कहियो कवि 'जगनंद' ॥ ७५ ॥
पढ़ै सुनै जो चित्त दै ताकौ मंगल होइ ।
है फल इह बन जातरा 'जगनंदन' से कोइ ॥ ७६ ॥

इतिश्री जगतानन्द श्रीगुसाईंजी की
-बनयात्रा वर्णनम्

ग्रंथाङ्क—२

ब्रज-वस्तु वर्णन

दोहा:-

ब्रज चौरासी कोस में इतनी वस्तु दिखात ।
ताकौ वर्णन करत है 'जगतनंद' विख्यात ॥१॥

१२ वन-*

मधुवन देखो तालवन, और कुमुदवन, चन्द ।
बहुलावन, काम रु खिदर, वृंदावन, 'जगनंद' ॥२॥
भद्र. भांडीर, बेलवन, लोह महावन, ऐन ।
ये बारह वन कहत हैं 'जगतनंद' करि बैन ॥३॥

२४ उपवन—

अराठ संतनकुंड है, श्रीगोवर्द्धन हेत ।
बरसानो, परमादरो, नंदगाव, संकेत । ॥४॥
मानसरोवर, शेषसाइ. खेलनवन जू ठोर ।
श्रीगोकुल, गोवर्द्धन, परासोली आन्योर ॥५॥

---

* संवत् १८८८ का लिखित स० भं० ब० १०८।७ पुस्तक में अराठ, मान सरोवर, गोवर्द्धन, गोकुल आन्योर, बिलासगढ़, कौरव वन के स्थान पर अडींग, माट, श्रीकुंड, ऊँचोगाम, बिलछू, कोटिवन तथा गंधर्ववन लिखे प्राप्त होते हैं ।

बदरी-आदि, भिलासगढ़, और पिसायो गाम।
अजनोखर, अरु करहला, कोकिलबन कौ ठाम ॥६॥
दधिवन, रावल, बच्छवन, और कौरववन लेत।
उपवन ये चौबीस हैं 'जगतनंद' कहि देत ॥७॥

१० वट-

पिपरोलीवट, जाववट, रासोलीवट जानि।
अचयवट संकेतवट परासोलीवट मानि ॥८॥
वंसीवट भांडीरवट बिसालवट अरु श्याम।
ये दस वट ब्रजभूमि में 'जगतनद' कौ धाम ॥९॥

७ चरणचिन्ह-

चरन-पहारी दोइ हैं, हाथी-पद के पास।
श्री गोवर्द्धन तरहटी, नंदगांव सुखरास ॥१०॥
श्री गोवर्द्धन के ऊपरे, सुरभीकुंड सुछंद।
चरन चिन्ह ये सात हैं ब्रज में कहि 'जगनंद' ॥११॥

५ पर्वत-

गोवर्द्धन नंदगांव में अरु बरसाना काम ×।
चरन पहाड़ी, पांच ये 'जगतनद' अभिराम ॥१२॥

७ देवी-

वृंदा देवी जानि लै अरु देवी संकेत।
वन-देवी, कात्यायनी, मथुरा-देवी हेत ॥१३॥

× कामबन चरण पहाड़ी का नाम है, दूसरी चरण पहाड़ी बटेन के पास है।

देवी नौवारी लखो चौवारी विख्यात ।
महाविद्या + 'जगनंद' कही व्रज में देवी सात ॥१४॥

२ दासी—

इक बंदी कों जानिये एक आनंदी होइ ।
'जगतनंद' के हेत हैं व्रज में दासी दोइ ॥१५॥

८ महादेव—

बूढे बाबा, देखिये भूतेश्वर, गोकर्ण ।
कामेश्वर, गोपेश जू गोकुल-ईश्वर * वर्ण ॥१६॥
उत्तरेश्वर चक्रेश जू 'जगतनंद' कहि पाठ ।
व्रज-चौरासी कोस में महादेव हैं आठ ॥१७॥

४ कदमखंडी-×

देखि सुनहरा पासतें जलबिहारि नंदगांव ।
कदमखंडी व्रज चार हैं 'जगतनंद' इहिं ठांव ॥१८॥

+ स० भं० च० १०८।७ मे ८ देवियों का नाम है जिसमें महाविद्या के स्थान विमला देवी और अधिक में मनसा देवी (मानसी गङ्गा पर) का उल्लेख है।

* गोकुल-ईश्वर=नन्देश्वर ।

७ श्रीगुसांईजी की बैठक ∸

श्री गोकुल, वृंदावने श्री गोवर्द्धन हेत ।
काम सुरभिकुंड पर, परासोली, सकेत ॥१९॥
पान सरोवर रीठोरा गोस्वामी विठलेश ।
ब्रज में बैठक सात हैं 'जगतनंद' शुभवेश ॥२०॥

६ बलदेवजी ()

उंचौगाव, अरींग में, रामघाट, नंदगांव ।
रेंढा, नारि जु छै कहे ब्रज 'बल' देखि सु ठांव ॥२१॥

२ ठकुरानी घाट—

रावल में सोभित सदा बरसाने सुखदानि ।
श्रीठकुरानी घाट ये कहि 'जगनंद' बखानि ॥२२॥

२ लीला —

लीला जन्म निहारिये ढाढी-ढाढिन और ।
लीला जग में दोइ हैं 'जगतनद' चित चोर ॥२३॥

३ हिंडोरा-

तीन हिंडोरा देखि ब्रज एक करहला बीच ।
दोइ लखे संकेत में 'जगतनंद' सुख खींच ॥२४॥

∸ बैठक चरित्र में १६ बैठकों का उल्लेख है ।

() स० मं० घ० १०८।७ पुस्तक में ७ बलदेव जी का उल्लेख है जिसमें जिखिन गाँव का विशेप उल्लेख है ।

७ दान लीला–

लीला दान निहारिये सात कहत 'जगनंद'।
देखि करहला दानगढ गहवरवन सुख कंद ॥२५॥
देखि जु गंगामानसी कदमखंडी चितचोर ।
व्रज में आनंद देत हैं दोइ सांकरीखोर ॥२६॥

४ सरोवर—

पान सरोवर, मान सर, और सरोवर चंद ।
प्रेम सरोवर चार ये व्रज में कहि 'जगनंद' ॥२७॥

६ पोखर—

पोखर षट अब देखि लै कुसुमोखर जिय जानि।
हरजीपोखर आंजनो (खर) पीरीपोखर मानि ॥२८॥
मानोखर अरु ईसरापोखर कहि 'जगनंद' ।
व्रज-चौरासी कोसमें व्रज कौ पूरनचंद ॥२६॥

२ ताल –

दोइ ताल व्रज बीच हैं रामताल लखि लेहु ।
और मुखारीताल है 'जगतनंद' करि नेहु ॥३०॥

१० कूप—

व्रज में लख दस कूप हैं, सप्तसमुद्र ही जान ।
नंदकूप अरु इन्द्रकूप चंद्रकूप करि मान ॥३१॥
एक कूप भंडारि कौ, करण-वेध कौ कूप ।
कृष्णकूप आनंदनिधि वेनु कूप सुखरूप ॥३२॥

७ श्रीगुसांईजी की बैठक —

श्री गोकुल, वृंदावने श्री गोवर्द्धन हेत ।
काम सुरभीकुंड पर, परासोली, सकेत ॥१९॥
पान सरोवर रीठोरा गोस्वामी विठ्ठलेश ।
ब्रज में बैठक सात हैं 'जगतनंद' शुभवेश ॥२०॥

६ बलदेवजी ()

उंचौगाव, अरींग में, रामघाट, नंदगांव ।
रेढा, नारि जु छै कहे ब्रज 'बल' देखि सु ठांव ॥२१॥

२ ठकुरानी घाट—

रावल में सोभित सदा बरसाने सुखदानि ।
श्रीठकुरानी घाट ये कहि 'जगनंद' बखानि ॥२२॥

२ खीला —

खीला जन्म निहारिये ढाढी-ढाढिन ओर ।
खीला जग में दोइ हैं 'जगतनंद' चित चोर ॥२३॥

३ हिंडोरा-

तीन हिंडोरा देखि ब्रज एक करहला बीच ।
दोइ लखे संकेत में 'जगतनंद' सुख खींच ॥२४॥

— बैठक चरित्र में १६ बैठकों का उल्लेख है।

() स० भं० ध० १०८।७ पुस्तक में ७ बलदेव जी का उल्लेख है जिसमें जिखिन गाँव का विशेष उल्लेख है।

७ दान लीला—

लीला दान निहारिये सात कहत 'जगनंद'।
देखि करहला दानगढ गहेवरवन सुख कंद ॥२५॥
देखि जु गंगामानसी कदमखंडी चितचोर ।
ब्रज में आनंद देत हैं दोइ साँकरीखोर ॥२६॥

४ सरोवर—

पान सरोवर, मान सर, और सरोवर चंद ।
प्रेम सरोवर चार ये ब्रज में कहि 'जगनंद' ॥२७॥

६ पोखर—

पोखर षट अब देखि लै कुसुमोखर जिय जानि।
हरजीपोखर आंजनो (खर) पीरीपोखर मानि ॥२८॥
भानोखर अरु ईसरापोखर कहि 'जगनंद' ।
ब्रज-चौरासी कोसमें ब्रज को पूरनचंद ॥२९॥

२ ताल —

दोइ ताल ब्रज बीच हैं रामताल लखि लेहु ।
और मुखारीताल है 'जगतनंद' करि नेहु ॥३०॥

१० कूप—

ब्रज में लख दस कूप हैं, सप्तसमुद्र ही जान ।
नंदकूप अरु इन्द्रकूप चंद्रकूप करि मान ॥३१॥
एक कूप भंडारि कौ, करण—वेध कौ कूप ।
कृष्णाकूप आनंदनिधि वेनु कूप सुखरूप ॥३२॥

एक जु कुबजाकूप है गोपकूप लखि लेहु।
'जगतनंद' बरनन करत व्रजसों करो सनेहु ॥३३॥

१६ घाट—

व्रज में सोलह घाट हैं लखो घाट ब्रह्मांड।
गऊघाट गोविंद को घाट जु बन्यो प्रचंड ॥३४॥
अरु ठकुरानीघाट है, घाट जसोदा देखि।
तथा उतरेश्वर घाट है, घाट वैकुंठ कों पेखि ॥३५॥
घाट एक विसरांत कौ अरु प्रयाग कौ घाट।
घाट बंगाली देखिये, राम घाट कौ पाट ॥३६॥
केसीघाट, बिहारि लखि चीरघाट नंदघाट।
गोपीघाट बिचारि, लै 'जगतनंद' इहबाट ॥३७॥
और हु घाट अनेक हैं सो सब नूतन जान।
घाट पुरातन सोलहै, 'जगतनंद' मन मान ॥३८॥

७ डोल—

सात डोल व्रज मांझ हैं श्री गोविंद, हरदेव।
मदनसुमोहन कों लखो मदनसिंह करि सेव ॥३९॥
राउ उत्तर को डोल है और डोल संकेत।
दान, मानगढ पे लहैं, 'जगतंनद' कहि देत ॥४०॥

१६ मंदिर—

मंदिर सोरह देखि व्रज श्रीगोकुल में सात।
श्रीगोवर्द्धननाथ कौ मंदिर परम सुहात ॥४१॥

रोहिनी मंदिर देखिये और मंदिर संकेत।
दान मान मंदिर लखो मंदिर श्याम सुहेत ॥४२॥
मंदिर गोविंददेव कौ, मदनसुमोहन जान ।
मंदिर हैं सब देव के यों 'जगनंद' बखान ॥४३॥
और जु मंदिर बहुत हैं ते सब नौतन लेख।
कहत पुरातन सैरहै 'जगतनंद' हग देख ॥४४॥

३३ रास मंडल—

वृंदावन में पांच हैं क्रीडत ब्रज के ईस।
ब्रज में मंडल रास के 'जगतनंद' तैंतीस ॥४५॥
द्वै मंडल है कामबन, नंदगांव में एक ।
दोइ करहला बीच हैं, दोइ दानगढ़ टेक ॥४६॥
एक सांकरी खोरि में, इक परवत में मान ।
एक मानगढ़ देखिये, द्वै विलासगढ़ जान ॥४७॥
गहवर वन में एक है, अरु संकेत ही चारि ।
एक पिसोये जावबट दोइ लखो उर धारि ॥४८॥
एक कोकिला विपिन में, तीन जु ऊँचेगांउ ।
सिला खिसलनी एक है, इक गिरि टीले नांउ ४९॥
एक सुनेहरा बीच है, कदम खंडि मधि एक ।
इहै पुरातन जानिये नूतन भये अनेक ॥५०॥

१५९ कुंड—

उनसठ ऊपर एक सौ सिगरे ब्रज में कुंड ।
चौरासी कामे लखो, पचहत्तर ब्रज कुंड ॥५१॥

कुंड जु मधुवन, तालबन, और कुमुदवन देख ।
संतनकुंड जु, गांधर्व है, बहुलावन उल्लेख ॥५२॥
राधाकुंड जु कृष्ण को कुंड, नारद को जान ।
कुंड श्री गंगा मानसी, चक्र तीर्थ हो मान ॥५३॥
ब्रह्मकुंड, रणमोचना, पाप-मोचन को कुंड ।
संकरषन को कुंड है, तोरा (य) प्रबल सुमंड ॥५४॥
सुरभी-कुंड जो अपसरा और कुंड गोविंद ।
कुंड विलास जु रुद्र को कुंड लखो व्रज इंदु ॥५५॥
कृष्ण-कुंड, परमंदर, अलक नंद सुख साज ।
धर्मकुंड, लंका, विमल कुंड, कामना माज ॥५६॥
कुंड जसोदा, लुकलुको, कुंड बराह उछाह ।
कृष्ण कुंड कामा लहो, देहकुंड अवगाह ॥५७॥
कदम खंडी को कुंड है, कुंड दोहनी जोह ।
रतन कुंड, मदसूधना, शक्र सोत, सुर मोह ॥५८॥
कृष्णकुंड संकेत में कृष्णकुंड बन लोह ।
ब्रह्मकुंड, बलदेव को ग्वालकुंड अति सोह ॥५९॥
कुंड एक बलभद्र को और सरस्वति कुंड ।
कुंड गरुड गोविंद को दाता कुंड सुकुंड ॥६०॥
कृष्ण कुंड नंदगांव में विमल सुकुंड सुहात ।
दधिबन ललिता कुंड है, कुंड जसोदा मात ॥६१॥
व्रजबासी को कुंड है, छछिहारी सुख देत ।
कुंड दामोदर दर्स जो देहकुंड हरि हेत ॥६२॥

करम खंडी कौ कुंड है, जलविहारी कौ धारि ।
मधुसुदन अरु जोगिया, नानाकुड निहारि ॥६३॥
बैरागी कथारी कुंड है, ललिताकुंड, वट जाव ।
कृष्णाकुंड है खिदर वन और पिसाये गांव ॥६४॥
कुंड कोकिला देखिये, कुंड लखो बलभद्र ।
कृष्णा कुंड अरु वैठने, सीतल कुंड सुभद्र ॥६५॥
चरन पहाडी कुंड है, कुंड भामिनी ठीक ।
रासौली कौ कुंड लखि सूरज कुंड नजीक ॥६६॥
छीर समुद्र जु कुंड है, ब्रह्म-कुंड अवगाहि ।
उनसठ ऊपर एकसौ कुंड सबै मिलि न्हाइ ॥६७॥
और ही कुंड अनेक हैं ते सब नूतन जान ।
कुंड पुरातन एकसौ उनसठ ऊपर जान ॥६८॥

७५ ठाकुर -

व्रज चोरासी कोस में पंचोतर हरि-रूप ।
सबै पुरातन 'नंद जग' अगनित नूतन मूप ॥६९॥
श्री गोवर्द्धननाथजी श्री नवनीत प्रिय गाइ ।
नटवर मथुरानाथजी श्री विठ्ठलेश्वर राइ ॥७०॥
जै श्री द्वारकानाथजी बालकृष्णजी साथ ।
जै श्री गोकुलनाथजी भक्त नमावें माथ ॥७१॥
जै श्री गोकुलचंद्रमा मदन सु मोहनलाल ।
ए दस गोकुल बीच हैं फिरि 'जगनंद' निहार ॥७२॥
जै श्री माधोराइजू कल्याणराइ प्रतिपाल ।
जै श्री गोपीनाथजी और बिहारीलाल ॥७३॥

जै श्री चत्रभुजराइजी जै श्री मोहनराय ।
जै श्री राधाकृष्णजी कल्याणराइ सुख पाय ॥७४॥
श्री गोविंद श्री स्वामिनी और कन्हैयालाल ।
श्री ठकुरानीजी सहित आठ सखी प्रतिपाल ॥७५॥
नंदराइ जु जसोमति कृष्ण और बलदेव ।
जै श्री जसोदा-नंदनो श्री विट्ठलजी सेव ॥७६॥
श्री व्रजभूषण स्वामिनी श्री केशवराय ।
दीर्घ विष्णु श्री रामजी श्री रघुनाथ सुहाय ॥७७॥
कल्याणराइ नरसिंहजी श्री वराह सुखदान ।
जै श्री बद्रीआदि लक्ष्मीनारायन जान ॥७८॥
जै श्री दानीराइजी रसिकराइ हरदेव ।
जै श्री गोविंददेवजी जै गोविंद सुसेव ॥७९॥
जै श्री मदन सु मोहनो मनमोहन सुख कान ।
अटल बिहारीलालजी बंक बिहारी मान ॥८०॥
चीर बिहारी चीरहरन कुंजबिहारी कुंज ।
श्री राधावल्लभी सदा राधामाधव गुंज ॥८१॥
जै श्री गोपीनाथजी जै श्री जुगल किशोर ।
जै जै श्री घनश्यामजू और चकोरि चकोर ॥८२॥
जै श्री राइगोपालजी और गरुड गोविंद ।
जै श्री कालीय मर्दने हारयो जहां फणिंद ॥८३॥

शेषसैन श्री कृष्णजी देखि सखी सामाह ।
श्री ठाकुरजी जाइके सदा कदम की छांह ॥८४॥
अजनोखर में पियपिया श्रीगिरधारी लाल ।
जै श्री राधारमनजी राधामोहन गोपाल ॥८५॥
ये पचहत्तर रूप हैं ब्रज़-चौरासी कोस ।
नाम लेत, 'जगनंद' जो कटै कली के दोस ॥८६॥
मो बुद्ध सुधि आये जिते, तिते कहे समुझाइ ।
जहां तहां तें ढुंढि के कहे 'जगनंद' बनाइ ॥८७॥

इति श्रीजगतानंद कृत " ब्रज-वस्तु-वर्णनं "

* समाप्तम् *

———*———

व्रज-वस्तु तालिका —

क्रम संख्या	वस्तुएँ	संख्या
१	वन	१२
२	उपवन	२४
३	वट	१०
४	चरण चिन्ह	७
५	पर्वत	५
६	देवी	७
७	दासी	२
८	महादेव	८
९	कदम खंडी	४
१०	गुसांइजी की बैठक	७
११	बलदेव जी	६
१२	ठकुरानी घाट	२
१३	लीला	२
१४	हिंडोरा	३
१५	दानलीला	७
१६	सरोवर	४
१७	पोखर	६
१८	ताल	२
१९	कूप	१०
२०	घाट	१६
२१	डोल	७
२२	मंदिर	१६
२३	रास मंडल	३३
२४	कुण्ड	१५७
२५	ठाकुरजी	७५
	वस्तुओं का एकत्र योग	४३२

—सम्पादक

ग्रंथाङ्क–४

ब्रज-ग्राम वर्णन

दोहा:-

'श्रीवल्लभ-वंशावली' ब्रज-वस्तुन के नाम ।
'श्रीविट्ठल-वनजातरा' ब्रज की स्तुती सुधाम ॥१॥
चित लगाइ सुखपाइ के सुनि के लखि के नैन ।
वर्णत ब्रज के गाम सब 'जगतनंद' करि बैन ॥२॥
इनकौ गोकुलगाम है ब्रज चोरासी कोस ।
ताकौ वर्णन करत है 'जगतनंद' निर्दोस ॥३॥
गोकुल अति देख्यो रसिक श्री गोकुल के मांझ ।
गोकुल चित दीनो इहां सो कुल कबहुँ न बांझ ॥४॥
रतन जटित, मनि खचित हैं चौक गली सब बाट ।
अति आनंद नर नारि जहँ श्री ठकुरानी घाट ॥५॥
देखि होत आनंद बहु चित्त न होइ उचाट ।
बिन अनुभव नहि जानिये प्रेम जसोदा घाट ॥६॥
श्री जसुमति निज लाल कें बींधे कान अनूप ।
ता दिन तें सुख राखिये करणवेध कौ कूप ॥ ७ ॥
वदनचंद मुसक्यान अति रति बाढति लखि बाट ।
सोभित अद्भुत अंग छबि गोविंद गोविंदघाट ॥ ८ ॥

साधु संग सरसाइये श्री माधौ सुख ठाट ।
जहां परमेश्वर पाइये लखि उतरेश्वर घाट ॥ ९ ॥
श्री प्रभुजी नित बैठहीं छोंकर के तर आइ ।
डाल २ वा भक्त कें सालिग्राम दिखाइ ॥१०॥
गाइ चरावत गोप सब दुपहर प्यावत नीर ।
शोभा अद्भुत देखिये गऊघाट पर भीर ॥११॥
श्रीवल्लभ विट्ठलनाथ के दरस काज अनुमान ।
श्री शिव गोकुल में रहे कियो शिवालो पान ॥१२॥
गली २ सों हे अली! भली भांति लखि लेहु ।
सफल फली मन कामना करि गोकुल सों नेहु ॥१३॥
मथुरा तें आवत जबै ब्रजबासी अकुलाइ ।
जल पीवत बिसराम सों गोप कूप सरसाइ ॥१४॥
रमण रेति सुख देत है केतिक बरनों ताहि ।
ग्वाल हेत भरि लेत है बल समेत हरि जाहि ॥१५॥
आई थन विषलाइ कें लीने नंदकुमार ।
ताहि पटकि गोपालजी कियो पूतना-खार ॥१६॥
ग्वाल सहित गोपाल जू माटी खात प्रचंड ।
तीन लोक जसुमति लखे भयो घाट ब्रह्मंड ॥१७॥
जस पावत चावत सरस गावत डोलत गोप ।
मन भावत गोविंद लख्यो इहै महावन ओप ॥१८॥
बैठक श्री नंदराइजू जमुला-अर्जुन-रूप ।
सोभित ब्रजबासी सबै देख्यो नंद कौ कूप ॥१९॥

भज पेखनि कों देखिये मेंडनि खेत सुभेव ।
ये डाली, ये रेवती रेंडा में बलदेव ॥२०॥
मनो गयंदी देखि के स्वछंदी सब सेव ।
शोभित बंदी परम रुचि और अनदी देव ॥२१॥
जहां बसत वृषभान जू श्रीराधा चित चाइ ।
ज्यों अलकावलि देखिये त्यों रावल सरसाइ ॥२२॥
श्री मथुरा मथुरा कहै बढत हिये आनंद ।
भक्त हेत सुख देत है व्रज कौ पूरन चंद ॥२३॥
तौहिलों तहां ताईं गरे परी अविद्या तात ।
ज्यों लो ये निरखै नहीं श्री मथुरा विसरांत ॥२४॥
सुर नर मुनि गंधर्व सब दर्स करत हैं आय ।
नीलजलद तन, पीत पट शोभित केशोराय ॥२५॥
मन-कामना पूरन करन श्रीमथुरा प्रतिपाल ।
गुनन सहित अति राजहीं भूतेसुर ससि माल ॥२६॥
लिये खडग कोप्यो बहुत रक्यो कंस अति नीच ।
केश झटकि हरि खेंचियो कसखार के बीच ॥२७॥
रावन कोटि आदि देव सब तीरथ संदोह ?
सबै घाट गोकरण लों मथुरा सुर कों मोह ॥२८॥
मुठी धूरि ले कृष्ण लखि जरासंध की चोट ।
मथुरा की रचा करी धूरि कोट की ओट ॥२९॥
निज गोपी वैकुंठ कौ दरस दियो भरपूर ।
ताहि ठौर गोपाल कों लखि लीने अक्रूर ॥३०॥

गाइ चरावत ग्वाल संग भूख लगी हिय ओढ ।
यज्ञपत्नी ओदन दियो भयो तबै भतरोड ॥३१॥
गांइ ग्वाल रच्छा किये मनमें आनंद बाढि ।
पठयो कालिय नाग कों कालदिह तें काढि ॥३२॥
गोप-सुता तपसी सबै देखि कान्ह चित चोर ।
चढि कदम्ब चोरे बसन चीरघाट की ओर ॥३३॥
मुख मटकन, लटकन मुकुट, गरे डारि निज बांह ।
ठाढे व्रजजीवन महा बंसीबट की छांह ॥३४॥
मदन सिंधु की ठोर तें बंसबिट लों देखि ।
कुंज कुंज प्रभु रूप सब गोपेसुर उर लेखि ॥३५॥
निसानिस्थ? प्रभात में अरु दुपहर पुनि सांझ ।
सदा रहत नंद-नद जू श्री वृंदावन मांझ ॥३६॥
लागत मोकों नीक अति राज को सुख इद
देखो गाम छटीकरा जहां गरुड गोविन्द ॥३७।
जहँ तरुवर अति सघन वन धरा सरोवर लेख ।
श्री राधावर खेल तें भानुसरोवर पेख ॥३८॥
पीतांवर कटि काछनी धारे गिरिधर धीर ।
हरि फेरत दै टेर सब गांइन के भंडीर ॥३९॥
मोह रख्यो मन सोहनो विखया सहमी जाइ ।
मोहन भाजि लै मोह तजि जोलों है बन आइ ॥४०॥
ग्वाल फिरे गल जू लगे देखि बेलवन नित्त ।
सबै अभद्र हि दूरि करि देखि भद्रवन चित्त ॥४१॥

सघन वृक्ष सातल सुजल पंछी बोरें तुंड ।
अति तारन नर नारि सब ताही संतनुकुंड ॥४२॥
श्री गिरधर मुरली धरें अधर सुधारस पाइ ।
टेरत हैं रति चित्त द श्रीमधुवन तर गांइ ॥४३॥
पीतांबर कटि बांधिके बक मार्‍यो मुख फारि ।
गांउ बसत है बगथरा सो चित नेम निहारि ॥४४॥
पर्‍यो अघासुर गैलमें करि योजन कौ देह ।
ताहि गोपाल संघारियो पासोली लखि लेह ॥४५॥
हलधर धेनुक मारि के बाल खवाये ताल ।
देखो चित दै तालबन जहं सोवें गोपाल ॥४६॥
गिरधर हलधर नेह अति लिये गुवाल समाज ।
हार बनावत कुमुद के देखि कुमुदबन आज ॥४७॥
पठयो कंस प्रसंग करि बच्छासुर काल ।
ताहि मारि गोपालजू कियो बच्छवन ताल ॥४८॥
गांइ चरावत कृष्णजू तिन में बहुला गांइ ।
भयो सु ताके नाम सों बहुलाबन सरसाइ ॥४९॥
ग्वाल लिये गोपाल जू गांइ चरावत घेरि ।
राम सहित अभिराम जू गाम कामवन हेरि ॥५०॥
गांइ चरावत कृष्ण देखो उत्तम ठाम ।
लक्ष्मीनाथ विराजहीं माधि सिंहासन गाम ॥५१॥
चरिवे कों गोधन सबै हांकि दिये सुख मानि ।
ग्वाल सहित हरि खिसलहीं सिला खिसलनी जानि ॥५२॥

धर्मकुंड वाराहजी पांडव पांच निहारि ।
विमलकुंड, लंका, सुरभि कुंड लखे उर धारि ॥५३॥
देखि सुनहरा पास तहं कदमखंडी सुख रूप ।
जलविहारी लीला करें गोपी-गोकुल-भूप ॥५४॥
आरुठ (अरिष्टासुर) कौ संघार करि कृष्ण देव बल जोर ।
न्हावे कों प्रभुजू कियो कृष्णकुण्ड तिहिं ठोर ॥५५॥
राम विलास हुलास गहि ? (अति) गोपी बन कों झुंड ।
खेलत श्रीगोपाल तहँ निरखि नैन श्रीकुण्ड ॥५६॥
श्री गोवर्द्धन उद्धरन खेलत ब्रज की खोर ।
इंद्र-गर्व कों दूरि करि फिरि चितवत आन्योर ॥५७॥
कुंड गंधर्व कौ गंधेसरा और श्याम वट देखि ।
कुसुमोखर गिरि तरहटी चरन कमल कों पेखि ॥५८॥
शोभित अति गोपाल जू संकरसन कौ कुंड ।
नीकौ तुलसी चोतरा बूढा बाबू झुंड ॥५९॥
गो टेरन बाजनी सिला ऐरावत-पद खोज ।
गोपासिला सिंदुरी कही हरजी पोखर ओज ॥६०॥
देखी दंडोती शिला बिलछू कुंड बिलास ।
प्रभु खेले चौगान तहँ बदरी-आदि हुलास ॥६१॥
इन्द्रादिक सब अमरगन कोउ न पावै भेव ।
ते धन धन जे निरखहीं गोधन में हरदेव ॥६२॥
रामकराय सुखराय अति ब्रजजन मोद बढाय ।
दान चुकावत ग्वाल संग शोभित दानीराय ॥६३॥

सुरभी सुरपति संग लिये निरखि कृष्ण-मुख इंदु ।
कियो राज-अभिषेक तहँ भयो कुंड गोविंद ६४ ।
गोवर्द्धन जब-कर धरयो लग्यो रह्यो भुवि पास ।
तासों कहिये पूंछरी भक्तन को सुखराम ६५।
ये अपसरा कुंड तहाँ ग्वाल सहित हरिराय ।
खेलत गांइ चरावहीं मनमे अति सुख पाय ।६६॥
राम-दरस को देव-ऋषि आये प्रभु कों टेक ।
साखि वे गये तां तही ? नागदकुड विलोक ।६७॥
भजन करत ठाडे भये खोजत जन्म कौ संग
जाजन भुजा पसारिके लहि मानसी गंग ६८ ।
अलकनंद कौ कुंड है देह कुड लखि लेहु ।
इन्द्र आइ पायनि परयो इन्द्रोली करि नेहु ६९ ॥
गांइ चरावत हंसत हरि लिये संग सब ग्वाल ।
मैं देख्यो मध्य जात ही डोलत अकड मदार ? ॥ ७ ॥
नंदगाम निरख्यो जबै तबै होत आनन्द ।
तहां विराजत नंदजू व्रज कौ पूरनचंद ॥ ७१ ॥
कुंड पोतरा देखिये पान सरोवर मान ।
अति अद्भुत वन की लीला नंदनद निधान ॥ ७२ ॥
बाबा नंद विराजहीं मैया जसुमति देखि ।
शोभित वल्लभदेवजू कृष्णचन्द्र उर लेखि ।।७३।।
नौनारी चौनारी कही वनवारी छछहारि ।
देखी पोखर ईसरा प्रेम सरोवर ढारि ॥ ७४ ॥

रास विलास हुलास अति शोभित प्रिय प्रिया देखि ।
तहां पीतपट धोइयो पीरी पोखर पेखि ॥ ७५ ॥
गोपिन हित नंद लाडिलो सबकों आनद देत ।
रहे चित्त हित करत नित करो ध्यान सकेत ॥ ७६ ॥
जिय अरसानो जिन रहे तरसानो पिउ नांउ ।
सब तें सरसानो यहै श्रीबरसानो गांउ ॥ ७७ ॥
बरसानो मानो सरस आनो पिय चित्त चोर ।
आस पास जानो खरिक भानोखर तिहिं ठोर ॥ ७८ ॥
ठकुरानी मंदिर बन्यो दान मान गढ जोहि ।
गहवर वनजु विलासगढ कुड दोहनी सोहि ॥ ७९ ॥
आपुने ग्वालन पकरि चितै बांकरी खोरि ।
दान देन मिस हां करी ग्वालिनि सांकरी खोरि ॥ ८० ॥
सब ग्वालिनि सों हसि कह्यो कान्ह चित्त के चोर ।
जहां फूलन के करहरा भयो करहला ठोर ॥ ८१ ॥
गांइ चरावत हरि कह्यो भयो पियासो ठांउ ॥
ता दिन तें सुखरासि यह भयो पियासो गांउ ॥ ८२ ॥
श्रीहरि जब कंकर लियो श्रीप्यारी पग देत ।
तब तें देख्यो जाइ बट पिय प्यारी संकेत ॥ ८३ ॥
हरि-दग अंजन देत हैं श्रीमैया करि नेहु ।
पेखि परस्पर देह कें अंजनोखर लाखि लेहु ॥ ८४ ॥
मोर चन्द्रिका जोर छबि नवकिशोर चितचोर ।
चितवत मेरी ओर इह ठाड़ो अटा अटोर ॥ ८५ ॥

नंदि किशोर चकोरनिधि माखन पर-चितचोर ।
मोरचन्द्रिका सिर धरें लखे खिदर वन ओर ॥ ८६ ॥

मत्त भये बलदेवजू जमुनावतो पुकारि ।
याही तें जमुनावतो गाम बस्यो उर धारि ॥ ८७ ॥

खेलत व्रज कौ छत्रपति मनु नछत्रपति सांझ ।
बरस-नछत्र निकर लिये सखा छत्र घन मांझ ॥ ८८ ॥

छीर सरोवर द्रुम ललित थल ता रही चहुं ओर ।
कीरन ? दिनेश न आवहीं शेष-शयन की ठौर ॥ ८९ ॥

अद्भुत सर तरुवर सरस देख्यो अचरज ठांउ ।
लक्ष्मीनाथ विराजहीं मध्य सिहाने नांउ ॥ ९० ॥

चारवदन आये इहां भयो चौमुहा नांउ ।
चक चोंधी नैननि भई बस्यो चंचोधा गांउ ॥ ९१ ॥

वांछित ते पावे सबै रूप अनंत अभेव ।
ऊंचो गाम अरींग में नरी बीच बलदेव ॥ ९२ ॥

गोरी टीलो देखिले मुरवारी सुख दैन ।
खेलत वन दधिगाम में और कोटिवन चैन ॥ ९३ ॥

अक्षय वट प्रभु रास करि परासोली के मांझ ।
गोपिन हित नंदलाडिलौ सरद रात दिन सांझ ॥ ९४ ॥

मछरा सब इकठे किये सो बछरोटी गांउ ।
पीपरोली शोभित महा तरु पीपर के नांउ ॥ ९५ ॥

बसई जटवारी विहज मै रासोक मंदार ।
त्यों सब सौंतिन को भई लखी आज ही रार ॥ ९६ ॥

तोहारी उमराह लखि परसो सीह निहारि ।
पेठै पळगांउ ओ सारस आंदोरी बजरार ॥ ९७ ॥
दीय सकरवा हाथीयो लोधोली अलवाहि ।
परासोली वकई सुखद नोवारी मुखराइ ॥ ९८ ॥
मई जु नस्ती सोगरो ब्रज है रासु पिघोर ।
भैंसा वरि है दारि सिनी जयती सेंवरी रोर ॥ ९९ ॥
नंदनंरो अरु नंदनो लुहरवारी देहगांव ।
लुहावानो रुठि लावटी वरहानो सुभाव ॥ १०० ॥
लेवर मदरोला कह्यो गोकरनइ बिछोर ।
कोवरी नोनरो गहो परमदरा जु घमोर ॥ १०१ ॥
माट बिजोली सो दहेत ओ वल (दाऊ) गांउ ।
खेराट मरनो मरनो मामिनि घाटो जुही रेराउ ॥ १०२ ॥
साचोली अरु सेहरा वनचारी खेराल ।
गेंद वैठनी सिंगार हैं सदहारी पुर लाल ॥ १०३ ॥
गऊ अगोती नारहो लेह सबरा बटवार ।
गिडा जसोती होडिलो पाई काछि अरार ॥ १०४ ॥
सब गांइन में कृष्ण बल गांइ चरावत नित्त ।
बार वार ब्रज पाइये प्रभु में दीजे चित्त ॥ १०५ ॥
जाके दरस (न) परस तें मिटै सकल आसोच ।
हिय में ध्यान सदा रहो ब्रज चोरासी कोस ॥ १०६ ॥
ब्रज के गांउ अनेक हैं बरनों कितेक बनाइ ।
मो बुधि सुधि आए जिते तिते कहे सुबनाइ ॥ १०७ ॥

पढ़ै सुनै जो चित्त दै बरनै कविजन कोइ।
भक्ति मुक्ति पावै सही मन-वांछित फल होइ ॥१०८॥
श्रीवल्लभ विट्ठलेसकुल ''''ब्रज बरन्यो मन लाइ।
भक्त कृपा करि बांचियो 'जगतनंद' चित ध्याइ ॥१०९॥
श्रीगोवर्धन ईश के भजों चरन सुखकन्द।
इहै ध्यान निसिदिन रहो कहि यों कवि 'जगनंद' ॥११०॥

इतिश्री जगतानन्द कवि-कृत
ब्रज-ग्राम वर्णनम्
॥ समाप्तम् ॥

ग्रन्थाङ्क ५

दोहरा-साखी *

—*⊙*⊙*—

श्रीवल्लभ पद वंदि के सरस होत सो ज्ञान।
अधम रटत आनन्द में, करत अमिय रस पान॥ १ ॥
और कछू जानूं नहीं बिना श्रीवल्लभ एक।
कर ग्रहे छांड़े नहीं जिनकी एसी टेक॥ २ ॥
ऐसे प्रभु क्यों बिसारिये जिनकी कृपा अपार।
पल पल में रटत रहुं श्रीवल्लभ नाम उचार॥ ३ ॥
(श्री) वल्लभ, वल्लभ करत हों जहं तहं देखूं एह।
इनहिं छांड़ि औरै भजों तो जर जावै देह॥ ४ ॥
देवी देव आराधि के भूलो सब संसार।
श्रीवल्लभ नाम नौका बिना कहो कौन उतर्यो पार॥५॥
मैं तो इह चरन न छांड़िहों श्रीवल्लभ ब्रज-ईस।
जहं लों पेट में स्वांस है तोलों इह चरनन इह सीस॥६॥
श्रीवल्लभ रस अगाध है जहं तहं तु मति चोल।
जब गाहक हरिजन मिलै ता आगे तू खोल॥ ७ ॥
राधा माधौ परमधन शुक व्यासन फव गई लूट।
इह धन खरचो खुटत नहीं सो चोर लेत नहीं लूट॥८॥

---

* सर मं० हिन्दी बन्ध ३७ पु० १/२ के आधार पर

धूरि परो वा बदन में जाको चित नहीं ठौर ।
श्रीवल्लभवर हिं बिसारि के नैनन निरखै और ॥ ९ ॥
श्रीवल्लभ का छांडि के अन्य देव कों धाय ।
ता मुख पनियां कूटिये जब लगि टूटि न जाय ॥ १० ॥
बहुत दिना भटकत फिर्‌यो कछु नहिं आयो हाथ ।
श्रीवल्लभ वर सुमिर ते पर्‌यो पदारथ हाथ ॥ ११ ॥
बही जात भवसिन्धु मे दैवी सृष्टि अपार ।
ताकों उद्धार करन प्रकटे श्रीवल्लभ वर उदार ॥ १२ ॥
जस ही फैल्यो जगत में अधम उधारन आइ ।
ताकों विनती करत हों चरन कमल चित लाइ ॥ १३ ॥
पतितन में विख्यात है, महा पतित मेरो नाउ ।
अब जाचक होइ मांचिवो सरनागत हो पांउ ॥ १४ ॥
वल्लभ प्रभु करुणा करी कलि मे लियो अवतार ।
महापतित उद्धारि के कीन्हो जस विस्तार ॥ १५ ॥
सरनागत प्रभु लेत ही त्रिधा तिमिर दुख दूर ।
सोच मोह को टालि क देत आनंद भरपूर ॥ १६ ॥
वल्लभ वल्लभ करत हों श्रीवल्लभ जीवन प्रान ।
श्रीवल्लभ न बिसारिहो मोहि पिता मात की आन ॥ १७ ॥
श्रीवल्लभ वल्लभ कहत हो श्रीवल्लभ चितवत वैन ।
श्रीवल्लभ छांडि और भजे ता फूटि जाउ दोउ नैन ॥ १८ ॥
श्रीवल्लभ विट्ठलनाथ जू सुमिर एक घरी ।
ताको पातक यों जरे ज्यों अग्नि मे लकरी ॥ १९ ॥

कोटि दोस छिन में कटे जो लै श्रीवल्लभ कौ नाम।
तीन लोक पर गाइये सब निधि गोकुल गाम ॥२०॥
श्रीजमुना सों स्नेह करि एह नेम तू लेह।
श्रीवल्लभ के दास बिन ओरन सों तजि नेह ॥ २१ ॥
श्रीवल्लभ कुल कालि कल्पद्रुम छाइ रह्यो जग मांहि।
पुरुषोत्तम फल देत हैं नेकु जो बैठे छांहि ॥ २२ ॥
श्रीवल्लभ कुल कालि कल्पद्रुम फल लाग्यो विठलेश।
साखा सब बालक भई ताको पार न पावे शेष ॥ २३ ॥
श्रीवल्लभ राजकुमार बिन मिथ्या सबै विचार।
चढि कागद की नाव पै कहो कौन उतर्‍यो पार ॥ २४ ॥
भवसागर के तरन की इहै अटपटी वाट।
श्रीविठ्ठलेश पद-प्रताप तें गृह उतरन को यह घाट ॥२५॥
मीन रहत जल आसरें निकसत ही मरि जाय।
त्यों तू श्रीविठ्ठलनाथ के चरन कमल चित लाय ॥ २६ ॥
धरनी अति व्याकुल भई विधि सों करी पुकार।
तब श्रीवल्लभ अवतार ले तार्‍यौ सब संसार ॥ २७ ॥
कलियुग कालि सब धर्म कौ द्वारो रोक्यो आइ।
श्रीवल्लभ खिरकी प्रेम की निकसि जाय सो जाई ॥२८॥
साधन करो सतकुली हरि हिं भजो पल एक।
एक पलक के ऊपरें वारों कल्प अनेक ॥ २९ ॥
श्री वल्लभ आवत सुनों कछु नेरें कछु दूर।
इन पलकन सों झारि हों इन गलियन की धूर ॥ ३० ॥

श्री वल्लभ वल्लभ जो कहै, चल से हजारों कोस।
ताकौ पातक यों जरै ज्यों सूरज तें ओस ॥ ३१ ॥
श्री वल्लभ वर कों छांडि के भजै जो भैरव भूत।
ताकौ जनमायो गयो ज्यों वेस्या कौ पूत ॥ ३२ ॥
श्रीवल्लभ निरख्या नहीं, नहिं वैष्णव सों नेह।
ताकौ जनमायो गयो ज्यों फागुन कौ मेह ॥ ३३ ॥
भगवदी भगवद् एक है तासों राखो नेह ।
भव सागर के तरन की नौका कहि है एह ॥ ३४ ॥
उर बिच गोकुल, नैन (जमुना-) जल, मुख श्रीवल्लभ नाम।
तादृसिके* सत संग ते होत सकल सिध काम ॥ ३५ ॥
कलियुग में मिलनो अनुप भगवदीयन को संग।
जिनके संग प्रताप तें होत स्याम सों रंग ॥ ३६ ॥
हरि बड़े, के हरिजन वड़े, के वड़ हरि के दास।
हरि पे हरिजन यों वड़े जो हरि हैं उन की पास ॥ ३७ ॥
हरिजन आवे आगनें हसि नमाइए सीस ।
वे के मन की वे जानैं, पण अपने मन जगदीस ॥ ३८ ॥
हरिजन सों हांसी करै ताहि सकल विष हानि।
ता पर कोपत जगत-पति आप खरचो दुख मानि ॥ ३९ ॥
मन मजूंस गुन रत्न है चुप कर दीजै ताल।
गिराग मिलै तब खोलिये कूंची सब्द रसाल ॥ ४० ॥
मन नग ता कों दीजिये प्रेम पारखी होइ।
ना तो रहिए मौन गहि बिन जाने खोहोइ ॥ ४१ ॥

---

* तादृशी=ऐसा भक्त जो तादात्म्य भाव वाला हो।

प्रेम पारखी जो मिलै तासों करु मनुहार ।
मनुहारे जो पियु मिले तो सरवस दीजै वार ॥ ४२ ॥
रचक दोष न पाइये वे गुन प्रेम अमोल ।
प्रेम सुहागी जो मिले तासों अन्तर खोल ॥ ४३ ॥
रसिकन की जूथ नहीं कहुं सिन्धन जूथ न होइ ।
बिरहनवेली जह तह नहीं, सो घट घट प्रेम न होइ ॥४४॥
छिनु उतरे छिनु में चढ़े प्रेमी न कहिये सोइ ।
निस वासर भाजो रहै प्रेमी कहिये सोइ ॥४५ ॥
कृष्ण अमल माते रहै धरै न काहु की संक ।
तीन गांठ कोपीन में गिने इन्द्र को रंक ॥ ४६ ॥
ढोर गढन्ता नर गढो नेवण सिंगावण पूंछ ।
श्रीवल्लभ जांणा बिना धिक डाढ़ी धिक मूँछ ॥ ४७ ॥
श्रीवल्लभ वर सुमर्‍यो नहीं ने बोल्यो अलफल बोल ।
जाकी जननी भारे मुई वृथा बजायो ढ़ोल ॥ ४८ ॥
जननी जनै तो हरिजन जनै के दाता के सूर ।
ना तो रेभे वांझणी मती गमावे नूर ॥ ४९ ॥
वैष्णव आवे हरख्या नहीं ने हसि न जोड्या हाथ ।
ते नर मूरिग अवतरे पेट घिसै दिन रात ॥ ५० ॥
सारङ्ग राग-शिरोमनि, वेद-शिरोमनि श्याम ।
भक्त-शिरोमनि वल्लभी, सो बेस श्रीगोकुल गाम ॥५१॥
व्रज कौ जो आश्रय करै व्रज कौं जो कोउ चाहि ।
व्रज ता पर किरपा करै व्रज ही चाहै ताहि ॥ ५२ ॥

प्रभुता सों लघुता बड़ी प्रभुता सों प्रभु दूर ।
कीड़ी मुख साकर चुगे हाथी केसिर धूर ॥ ५३ ॥

झीणा झीणी होइ रहो जैसी झीणी दूब ।
घास फूस उड़ि जाइगी दूब खूब की खूब ॥ ५४ ॥

असन्त कौ आदर बुरो, भलो सन्त कौ त्रास ।
सूरज गरमी कों करै सो मेहा बरसन की आस ॥ ५५ ॥

श्रीवृन्दावन की माधुरी नित नित नोतन रंग ।
कृष्ण सदा क्यों पाइये बिन सीकन (?) के संग ॥ ५६ ॥

श्रीवल्लभ कह्यो जिन सब लह्यो, सकल सास्त्र को भेद ।
जिन वल्लभ जान्यो नहीं तो डूब्यो कुटुम्ब समेत ॥५७॥

श्रीवल्लभ के दरसतें भयो जन्म अनुकूल ।
भव सागर अथाह जल उतरन कों इह कूल ॥ ५८ ॥

श्री वृन्दावन के वृच्छ कौ मरमु न जानै कोइ ।
एक पात को स्मरण करै तो आप चतुर्भुज होइ ॥५९॥

श्रीवृन्दावन के चूहरा और गांउ के भूप ।
वाकी पटतर ना करै सो बेचि खात वह सूप ॥ ६० ॥

नन्द-नन्दन सिर राजहीं बरसाने वृषभान ।
दोउ मिलि क्रीड़ा करी उत गोपी इत कान ॥ ६१ ॥

प्रेम पारखी जो मिलै तासों करु मनुहार ।
मनुहारे जो पियु मिले तो सरवस दीजै वार ॥ ४२ ॥
रचक दोष न पाइये वे गुन प्रेम अमोल ।
प्रेम सुहागी जो मिले तासों अन्तर खोल ॥ ४३ ॥
रसिकन की जूथ नहीं कहूं सिन्धन जूथ न होइ ।
बिरहनवेली जह तह नहीं, सो घट घट प्रेम न होइ ॥४४॥
छिनु उतरे छिनु में चढ़े प्रेमी न कहिये सोइ ।
निस वासर भाजो रहै प्रेमी कहिये सोइ ॥४५ ॥
कृष्ण अमल माते रहै धरै न काहु की संक ।
तीन गांठ कोपीन में गिने इन्द्र को रंक ॥ ४६ ॥
ढोर गढन्ता नर गढो नेवण सिंगावण पूंछ ।
श्रीवल्लभ जांणा बिना धिक डाढ़ी धिक मूँछ ॥ ४७ ॥
श्रीवल्लभ वर सुमर्‍यो नहीं ने बोल्यो अलफल बोल ।
जाकी जननी भारे मुई वृथा बजायो ढ़ोल ॥ ४८ ॥
जननी जनै तो हरिजन जनै के दाता के सूर ।
ना तो रेभ्फे बांझणी मती गमावे नूर ॥ ४९ ॥
वैष्णव आवे हरख्या नहीं ने हसि न जोड़्या हाथ ।
ते नर मूरिग अवतरे पेट घिसै दिन रात ॥ ५० ॥
सारङ्ग राग-शिरोमनि, वेद-शिरोमनि श्याम ।
भक्त-शिरोमनि वल्लभी, सो बसे श्रीगोकुल गाम ॥५१॥
व्रज कौ जो आश्रय करै व्रज कों जो कोउ चाहि ।
व्रज ता पर किरपा करै व्रज ही चाहै ताहि ॥ ५२ ॥

प्रभुता सों लघुता बड़ी प्रभुता सों प्रभु दूर।
कीडी सुख साकर चुगे हाथी केसिर धूर ॥ ५३ ॥

झीणा झीणी होइ रहो जैसी झीणी दूब।
घास फूस उड़ि जाइगी दूब खूब की खूब ॥ ५४ ॥

असन्त कौ आदर बुरो, भलो सन्त कौ त्रास ।
सूरज गरमी कों करै सो मेहा बरसन की आस ॥ ५५ ॥

श्रीवृन्दावन की माधुरी नित नित नौतन रंग।
कृष्ण सदा क्यों पाइये विन सीकन (?) के संग ॥ ५६ ॥

श्रीवल्लभ कह्यो जिन सब लहो, सकल सास्त्र को भेद।
जिन वल्लभ जान्यो नहीं तो डूब्यो कुटुम्ब समेत ॥५७॥

श्रीवल्लभ के दरसतें भयो जन्म अनुकूल ।
भव सागर अथाह जल उतरन कों इह कूल ॥ ५८ ॥

श्री वृन्दावन के वृच्छ कौ मरमु न जानै कोइ।
एक पात को स्मरण करै तो आप चतुभुज होइ ॥५९॥

श्रीवृन्दावन के चूहरा और गांउ के भूप ।
ताकी पटतर ना करै सो बेचि खात वह सूप ॥ ६० ॥

नन्द-नन्दन सिर राजहीं बरसाने वृषभान ।
दोउ मिलि क्रीड़ा करी उत गोपी इत कान ॥ ६१ ॥

मन पच्छी तन मन करो उड्डुजा याही देश ।
श्रीगोकुल गाम सुहामनो जहां बसे श्रीगोकुलचन्द्र नरेश ।६२।
मन पच्छी तन लग उड़ै बसै वासना मांहि ।
प्रेम बाज की झपट में जब लग आयो नांहि ॥ ६३ ॥

इतिश्री 'जगतानन्द' कृत दोहरा-साखी

॥ सम्पूर्णम् ॥

प्रथाङ्क ६

उपखाने सहित दशम-कथा[1]

मंगलाचरण-

(१) "सौ बातन की बात"—

सौ बातन की बात भजो श्री विट्ठल नाथै[2] ।
गोकुलनाथ सुनाय राय विट्ठल मम माथै ॥
श्रीगोवर्धन-ईस गुरुन के चरन मनाऊँ ।
उपखानों के सहित[3] दशम की लीला गाऊँ ॥
गाऊँ गुन गोपाल के "जगत-नन्द" विख्यात ।
भज लै कृष्ण-चरित्र कों "सौ बातन की बात" ॥१॥

ब्रह्मस्तुति-

(२) "कुआ में कौ मेंढका करै[4] सिन्धु की बात"-

करै सिन्धु की बात, भूमि कों बोझ भयो जब ।
दुष्ट[5] नृपन की भीर, गई धरनी विधि पै तब ॥
प्रभु की आज्ञा पाइ[6] कहै 'जगनन्द' लियें सिधि ।
लै हैं हरि अवतार दूरि दुख करि हैं इह विधि ॥
विधि[7] कछु वै समुझै नहीं माया लपट्यो गात ।
"कुआ में कौ मेंढका करै सिन्धु की बात" ॥ २ ॥

---

१. मु० श्रीमद्भागवत-दशम-चरित्रोपखान भाषा ।
२. मु० नाथहिं । माथहिं । ३ मु० साथ । ४. का कहै समुद्र की० ।
५. मु० देत्नन के हित धरनि धेनु ह्वै गई विधि पैं० ।
६. कां० मांगि दियो उत्तर सब कों सिधि । मु० भई मिल्यो उत्तर सबकों सिधि । ७. मु० यह नरकछु समुझैं० ।

मन पत्ती तन मन करो उड्डुजा याही देश ।
श्रीगोकुल गाम सुहामनो जहां बसे श्रीगोकुलचन्द्र नरेश ।६२।
मन पत्ती तन लग उड़ै बसै वासना मांहि ।
प्रेम वाज की झपट में जब लग आयो नांहि ॥ ६३ ॥

इतिश्री ' जगतानन्द ' कृत दोहरा-साखी

॥ सम्पूर्णम् ॥

प्रथाङ्क ६

उपखाने सहित दशम-कथा[1]

मंगलाचरण-

(१) "सौ बातन की बात"—

सौ बातन की बात भजो श्री विट्ठल नाथै[2] ।
गोकुलनाथ सुनाथ राय विट्ठल मम माथै ॥
श्रीगोवर्धन-ईस गुरुन के चरन मनाऊँ ।
उपखानों के सहित[3] दशम की लीला गाऊँ ॥
गाऊँ गुन गोपाल के "जगत-नन्द" विख्यात ।
भज लै कृष्ण-चरित्र कों " सौ बातन की बात" ॥१॥

ब्रह्मस्तुति:-

(२) 'कुआ में कौ मेंढका करै[4] सिन्धु की बात"-

करै सिन्धु की बात, भूमि कों बोझ भयो जब ।
दुष्ट[5] नृपन की भीर, गई धरनी विधि पै तब ॥
प्रभु की आज्ञा पाइ[6] कहै 'जगनन्द' लियें सिधि ।
वै हैं हरि अवतार दूरि दुख करि हैं इह विधि ॥
विधि[7] कछु वै समुझै नहीं माया लपट्यो गात ।
"कुआ में कौ मेंढका करै सिन्धु की बात" ॥ २ ॥

---

१ मु० श्रीमद्भागवत-दशम-चरित्रोपखान भापा ।
२. मु० नाथहिं। माथहिं। ३. मु० साथ। ४. का कहै समुद्र की०।
५. मु० पैखन के हित धरनि धेनु ह्वै गई विधि पै०।
६. का० मांगि दियो उत्तर सब कों सिधि। मु० भई मिल्यो उत्तर सबकों सिधि। ७. मु० यह नरकछु समुझै०।

आकाश वाणी–

३) " मांगे भैंस रुकावनी[१] करै पडा कौ मोल" ।

करै पडा कौ मोल, ज्याहि वसुदेव चले जब ।

लियें देवकी सग[२] कंस रथ हांकत भो तब ॥

भइ बानी आकास गर्भ तोहिं अष्टम मारै ।

फिरि[३] बैठ्यो तब[४] कंस केस गहि बैन उचारै ॥

चारु[५] सबै सुत देहु तु, करि वसुदेव हि कोल ।

" मांगे भैंस रुकावनी करै पडा को मोल" ॥ ३ ॥

प्राकट्य–

(४) "घर के घर बाहरि के बाहरि "–

गृह वसुदेव लियो अवतार ।

भए चतुर भुज रूप अपार ॥

वसुदेव[६] कहै इह रूप छिपाइ ।

कहै[७] कृष्ण तब वचन सुनाइ ॥

मो कों नन्द-गेह धरि आवो ।

बाल-रूप[८] ह्वै कें , मन भावो ॥

बेड़ी खुली द्वार खुलि गए ।

सब दरवान मृतक-से भए ॥

---

१ मु० रुगांमनी । २ कां साथ । ३ मु० सुनि फिर बैठ्यों कंस केस गहि वचन ४ स० जगनंद केस गहि कंस० । ५ स० उच्चार सवै सुनि देवकी करी वसुदेवै कोल मु० मोहि सवै सुत देहि तू करि वसु० । ६ मु० लेहुलाल यह० । ७. स० जगतनंद प्रभु वचन ८. स. केलि मेरे मन० ।

वसुदेव[ε] चले माथे पीरे हरि धरि।
"घर के घर बाहरि के बाहरि" ॥ ४ ।

गोकुलगमन—

(५) "गई बात रे पाहुने घी दै आन्यो तेल"
घी दै आन्यो तेल जबै वसुदेव चले हैं।
गए महावन बीच[१] नन्द गृह सुफल फले हैं॥
बालक जसुमति पास राखि कन्या लै आए।
बंदी खाने मांहि त्रिया[२] कों आनि दिखाए॥
देखत कही[३] यों देवकी ऐसे प्रभु के खेल।
"गई बात रे पाहुने घी दै आन्यो तेल ॥ ५ ॥

माया रोदन-

(६) "हडुवा[४] बैठन दै नहीं कहै झुकतो-सो तौल"
कहै झुकतो-सो तौल बोलि दरवान बुलायो।
बालक रोदन सुनत कंस दौरयो ही आयो॥
कन्या लई[५] छुडाइ, देवकी कही यों कंसै।
इह तुहिं मारै नहीं, राज तुम करौ निसंसै[६]॥

ε. मु० लै वसुदेव चले हरि सिर धरि। १. स० जगतनंद गृह०। २ मु० देवकिहिं आनि०। ३ मु० ही कहि देवकी सांचे प्रभु०। ४ मु० बनियां बैठन देत नहि कहै हरो तो तौल ५. स० लै जगनन्द देवकी बोली कंसै। कां० लई उठाइ०। ६. मु० प्रसंसै।

संसै[1] नहिं तुव पुत्र कों ब्याहिं देउंगी कौल ।
"हडुवा बैठन-दे नहीं कहै झुकतो-सो तौल" ॥ ६ ॥

पूतना प्रवेश—

(७) "जाकों कोई गिनै न गूथै सो लाडा[2] की भुआ",
घरतें निकसि पूतना आई सुन्दर[3] रूप बनायो ।
सिगरे ब्रज में फिरि[4] फिरि आई कीन्हो निज मन भायो ॥
नन्द जसोमति[5] के गृह पैठी कान्हर लिए उठाई ।
लै कान्हियाँ चुचकारति चुम्बति एसी करी ढिठाई ॥
मन खोटी ऊपर तें नीकी ज्यों तृन छायो कुआ ।
"जाकों कोई गिनै न गूथै सो लाडा की भुआ ॥ ७ ॥

(८) "चली छांछ कों नागरी पाछें पीठ कमोरि"
पाछें पीठ कमोरि दौरि यह ब्रज में आई ।
अपनो[6] रूप छिपाइ पूतना कंस पठाई ॥
मनु[7] गोपी को भेस देखि जसुमति अरु रोहिनि ।
थकित ह्वै रहीं चाहि याहि लागत अति सोहिनि ॥

---

१ मु० संसै है तुहि पुत्र की वासुदेव की कौल । २ मु० लाला० । ३. कां० औरे रूप० । ४. स० जगतनंद कीन्हो मन० । ५. मु० मिहरि के घर में बैठी कान्हा लियो उठाई । गोदी लै पुचकारन लागी कीन्ही बड़ी ढिठाई । ६ मु० निसिचर रूप० । ७. मु० लखि गोपी कौ भेप लखत ही जसुमति रहनी । चकित सी ह्वै रही लखन कहँ लागत सुहनी ।

सोहिनि थन[1] लपटाइ विस राखि कंचुकी चोरि।
"चली छांछ को नागरी पाछें पीठ कमोरि ॥८॥

पूतना वध—

(९) "ठाली नाइन मूंडै पटा"
पकी[2] गोद लै हरि कों भाजी।
दरवाजे बाहिर अति लाजी[3] ॥
गिरी खाइ[4] कें तबै पछारि।
लम्बे[5] पग अरु हाथ पसारि ॥
व्याकुल प्रान फिरत हैं नैन।
हिय पर कान्ह निरखि[6] नहिं चैन ॥
वारमार[7] फिरावै लटा "ठाली नाइन मूंडै पटा ॥९॥

शकटासुर वध—

(१०) धोबी कौ सो कूकरा घर कौ भयो[8] न घाट"
घर कौ भयो न घाट एक[9] शकटासुर भोंडो।
गयो[10] महावन बीच, कंस भूपति[11] कौ लोंडो ॥
गाडा में छिपि रह्यो[12] कान्ह जू मारि गिरायो।
नाजानै कित गयो कहूं ढूंढ्यो नहिं पायो ॥

. १ मु० कुच०। २ मु० गोदी लै हरि को जब भाजी। ३. मु० साजी। ४. मु० भूमि पर खाइ पछार। ५. फा० लांबे। ६. स० परत०। ७ मु० बारम्बार फिरावै०। ८ मु० रह्यो। ९. मु० असुर शकटासुर आयो। १०. स० जगतनन्द ब्रज गयो कंस०। १२ मु० राजा मन भायो। ११. मु० गयो कृष्णजू०।

संसै[1] नहिं तुव पुत्र कों व्याहिं देउंगी कौल ।
"हट्टुवा बैठन दे नहीं कहै झुकतो-सो तौल ॥ ६ ॥

पूतना प्रवेश—

(७) "जाकों कोई गिनै न गूंथै सो लाडा[2] की भुआ",
घरतें निकसि पूतना आई सुन्दर[3] रूप बनायो ।
सिगरे व्रज में फिरि[4] फिरि आई कीन्हो निज मन भायो ॥
नन्द जसोमति[5] के गृह पैठी कान्हर लिए उठाई ।
लै कान्हियाँ चुचकारति चुम्बति एसी करी ढिठाई ॥
मन खोटी ऊपर तें नीकी ज्यों तृन छायो कुआ ।
"जाकों कोई गिनै न गूथै सो लाडा की भुआ ॥ ७ ॥

(८) "चली छांछ कों नागरी पाछें पीठ कमोरि"
पाछें पीठ कमोरि दौरि वह व्रज में आई ।
अपनो[6] रूप छिपाइ पूतना कंस पठाई ॥
मनु[7] गोपी को भेस देखि जसुमति अरु रोहिनि ।
थकित ह्वै रहीं चाहि याहि लागत अति सोहिनि ॥

---

१ मु० संसै है तुहि पुत्र को वासुदेव की कौल । २ मु० लाला० । ३. कां० औरे रूप० । ४. स० जगतनंद कीन्हो मन० । ५. मु० मिहरि के घर में बैठी कान्हा लियो उठाई । गोदी लै पुचकारन लागी कीन्ही बड़ी ढिठाई । ६ मु० निसिचर रूप० । ७. मु० लखि गोपी को भेष लखत ही जसुमति रहनी । चकित सी है रही स्यन कहँ लागत सुहनी ।

हेरि रही हरि कौ वदन, फिरि फिरि चितवति गात ।
इह उपखानो सांच है 'छोटे मुँह बड़ी बात ॥१२॥

नाम करन—

(१३) "घर[1] कौ जोगी जोगना आनगांउ कौ सिद्ध"
आनगांउ कौ सिद्ध गर्ग सों[2] जसुमति भाषै
या बालक[3] कौ नांउ धरत मन में अभिलाषै ।
सब[4] गुन पूरन कृष्ण ताहि लरिका करि जानै
नन्द राइ सुख पाइ कान्ह का नेकु न मानै ॥
नेकु न मानै कान्ह कों पूछे[5] हैं मुनि वृद्ध ।
"घर कौ जोगी जोगना आनगांउ कौ सिद्ध ॥१३॥

चोरी लीला—

(१४) "सूनो घर भँडियन कौ राज"
इक[6] ग्वालनि घर खबर मंगाए ।
दोइ चारि इक सखा पठाए ॥
ग्वाल[7] कहैं हां कोऊ नाहीं ।
कृष्ण कहै सब चलो तहांहीं ॥

---

१. कां० ज्यों घर को जोगी कहे आन० । २ मु० जसुमति सो भाषै । ३. मु० लरिका के नाम धरो मन० । ४. स० जगतनन्द प्रभु कृष्ण० । ५. कां० बूझत है । ६. मु० एक ग्लाल सों खबर मँगाई दुइ चारिक तँह दिये पठाई । ७ मु० ग्वाल कह्यो तहँ कोऊ० ।

ढूंढ्यो नहिं पायो कहूं कंस निहारे घाट ।
"धोबी को-सो कूकरा घर को भयो न घाट' ॥१०॥

तृणावर्त वध—

(११)"कूकर चौक चढ़ाइये चाकी चाटन जाय"
चाकी चाटन जाय आइ ब्रज[१] भीतर लचक्यो ।
तृणावर्त 'जगनन्द'[२] नन्दनन्दन लै उचक्यो ॥
हरिजू पकरयो कंठ, कह्यो तुहिं मुक्त करोंगो ।
वह[३] बहुतै विललाय छांड़ि हों नरक परोंगों ॥
नरक परोंगो छांड़ि मोहि, आयो[४] मन पछिताय ।
"कूकर चौक चढ़ाइये चाकी चाटन जाय" ॥११॥

बाल क्रीड़ा—

(१२)* "छोटे मुंह बड़ी बात"।
छोटे मुँह बड़ी बात मात जसुमति कनियाँ लै ।
हँसत कृष्ण 'जगनन्द' अग क्रीडत चुटकी दै ॥
दतियाँ चमकनि हसनि किलकिन करि लेत जँभाई ।
मैया निरखति विश्व वदन मधि हरषि हिराई ॥

---

१. मु० वह ब्रज में लचक्यो । २ मु० आवर्त्त । ३. मु० बहुत भांति विल्लाय छाँड़ि मैं नरक० । ४ मु० बहुत भांति बिल्लाय ।

* यह उपखाना मुद्रित तथा 'कां०' हस्तलिखित पुस्तक में नहीं है ।

हेरि रही हरि कौ वदन, फिरि फिरि चितवति गात ।
इह उपखानो सांच है 'छोटे मुँह बड़ी बात ॥१२॥

नाम करन—

(१३) "घर[1] कौ जोगी जोगना आनगांउ कौ सिद्ध"
आनगांउ कौ सिद्ध गर्ग सों[2] जसुमति भाषै
या बालक[3] कौ नांउ धरत मन में अभिलाषै ।
सब[4] गुन पूरन कृष्ण ताहि लरिका करि जानै
नन्द राइ सुख पाइ कान्ह का नेकु न मानै ॥
नेकु न मानै कान्ह कों पूछे[5] हैं मुनि वृद्ध ।
"घर कौ जोगी जोगना आनगांउ कौ सिद्ध ॥१३॥

चोरी लीला—

(१४) "सूनो घर भँडियन कौ राज"
इक[6] ग्वालनि घर खबर मंगाए ।
दोइ चारि इक सखा पठाए ॥
ग्वाल[7] कहैं हां कोऊ नाहीं ।
कृष्ण कहै सब चलो तहांहीं ॥

---

१. कां० ज्यों घर को जोगी कहे आन० । २ मु० जसुमति सों भाषै । ३. मु० लरिका के नाम धरो मन० । ४. स० जगतनन्द प्रभु कृष्ण० । ५. कां० बूझत हैं । ६. मु० एक ग्वाल सों खबर मँगाई दुइ चारिक तँह दिये पठाई । ७ मु० ग्वाल कह्यो तहँ कोऊ० ।

घर[१] में जाइ धसे गत गाज।
"सूनों (घ) र भँडियन कौ राज" ॥ १४ ॥

(१५) "सूनै घर कौ पांहुनो ज्यों आवै त्यों जाय"
ज्यों आवै त्यों जाय ग्वाल सब आए चोरी।
धसि[२] ग्वालिनि के गेह नेह सों हरि बल जोरी।
कोठा कोठी अटा ओट[३] वासन सब खाली।
कछु न आयो हाथ नाथ दीन्हीं तब गाली॥
गाली दै हरि उठि चले ग्वाल[४] कहैं पछिताय।
"सूनै घर कौ पांहुनो ज्यों आवै त्यों जाय ॥ १५॥

(१६) "चेरी लातनि कूटिये[५] दह्यो गुसाँइन खाय"
दह्यो गुसांइन खाय, कृष्ण चोरी कों आए[६]।
जो[७] कछु वाके गेह लह्यो सोइसब खाए॥
सोवत[८] बालक देखि दही मुख सों लपटायो।
भाजिगए हरि, ग्वालि तबै सुत सोवत पायो॥
पायो चोर जु गेह ही[९] मारत सुतहिं जगाय।
"चेरी लातनि कूटिये दह्यो गुसाँइन खाय ॥१६॥

---

१. मु. घर में धाइ धसे०। स. 'जगतनन्द घर धसिगल०।
२ मु. धसे ग्वालिनी गेह०। ३ मु अटारी सब ही खाली
४. जगतनंद पछि०। ५. मु. मारिये दही०। ६. मु आयो। ७. मु. धसत ग्वालिनी गेह लूटि दधि माखन खायो। मु८.लरिका सोवत देखि०। ९.मु. में।

उराहनो—

(१७) नाचन निकसी तो भलै[1] घूंघट काहे देति"
घूंघट काहे देति कहैं श्री कुवँर कन्हाई।
चोरी तें हरि पकरि गोपि[2] जसुमति पै लाइ।
देति[3] उराहन आइ, मात जू देत हमें दुख।
आइ गये तब[4] नन्द सकुच करि फेरि रही मुख।
मुख फेरति[5] क्यों ग्वालिनी कहति[6] जसोमति चेति।
"नाचन निकसी तौ भले घूंघट काहे देति" ॥ १७ ॥

(१८) "कंगन देख्यो हाथ में कहा आरसी ताहि"।
कहा आरसी ताहि ग्वालि जसुमति पै आवै।
देहि उरहनों नित्य[7] माइ के मन नहिं भावै॥
जसुमति[8] कहति रिसाइ सबै तुम झूठ ही बोलो।
अपनो[9] गोरस ढारि द्वार घर घर ही डोलो॥
डोलो[10] सुनकरि ग्वालिनी पकरि कृष्ण की बाँह।
"कंगन देख्यो हाथ में कहा आरसी ताहि" ॥१८॥

---

१. मु. भलो। २. मु ग्वालि। ३. कां. कहति उरहनो. ४ कां. नहाँ। स. जगनन्द। ५ मुं. फेरे क्यों। ६ मु. कहै। ७. मु अ ई
८. मु. कहत जसोमति माय सबै तुम झूठो०। ९. मु. गोरस अपनो द्वार द्वार १०. मु. घर घर डोलों ग्वालिनी गहे कृष्ण की.

नृत्य लीला—

(१९)"नांच न आवे आंगन टेढो" ।

बैठी जसुमति रोहिनि मैया ।
सखन मध्य खैलै दोऊ भैया ॥
नाचत[1] गावत नाँना भाँति ।
जगमगात अङ्गन की कांति ॥
दाऊजी कों नाचि न आवै ।
धरती में कछु दोष बतावै ॥
"कान्ह[2]हँसत बोलत अबरोढो । नांच न आवे आंगन टेढ़ो" ॥१९॥

दामोदर लीला—

(२०)"जो है दाझयो[3] दूध को पीवत[4] फूके छाछ" ।

पीवत फूकै छाछ दांवरी[5] जब ते बाँधे ।
लेंव[6] उखल दौरि पैरि कें बाहिर नांधे ॥
जमला अर्जुन वृच्छ दोउ दौड़त ह्वै तत छन ।
खेलत ग्वालन संग कृष्ण प्रफुल्लित अति मन ॥
मन में ता दिन तें डरी जसुमति राखति गांछ ।
जो है दाझयो दूध को पीवत फूकै छांछ ।२०॥

---

१ मु. नाचै गावै । २. बोलत कृष्ण कहत जब रेढ़ो । ३ मु. झारो।
४. मु.फूकत पीवै । ५ मु. दामरी जब तें बांधी । ६. मु. दी ऊखल सों जोरि दौरि के बाहर बाँधी ।

यमलार्जुन मोक्ष—

"नदी किनारे रूखड़ा जब तब होइ विनास" ।
(२१)जब तब होइ विनास धन्य नल के सुत दोउ ।
ऋषि नारद के शाप वृक्ष उपजे हैं सोउ ॥
आइ महावन बीच तीर यमुना के गोढ़[1] ।
यमला अर्जुन नाम[2] रहे बरसन के ठाढ़े ।
ठाढ़े लिये उखारि कैं[3] वचन राखि निज दास ।
"नदी किनारे रूखड़ा जब तब होइ विनास" ॥२१॥

वन क्रीड़ा—

(२२) "मूंग मोंठ में कौन बड़ो है" ।
बच्छ चरावत वन वन डोलें ।
वेनु बजावें[4] मधुरे बोलें ॥
भांति भांति ग्वालन संग खेलें ।
कंठन बीच भुजा कों मेलें ॥
चढ़ा चढ़ी[5] खेलत सुख पावें ।
अपनी[6] पीठि पै उन्हे चढ़ावें ॥

---

१. कॉ ठाढे । २ कां. देखि वरष सत के अति गाढे । गाढ़े । ३. कॉ दरि । ४. कां. बजावत । ५, ६. कॉ. में अधिक पंक्ति ।

कबहूं कूदत[1] कबहू झटकें ।
आपु गिरें ग्वालनि[2] धरि पटकें ॥
होत बराबर करें न कानि ।
अपनी जाति एक पहचानि ॥
इह विधि खेलत लाल लडो है ।
"मूंग मोंठ में कौन बड़ो है" ॥ २२ ॥

वत्सासुर वध-

२३ "गधा[3] चढे पांचों असवार" ।
जब आयो वच्छासुर ब्रज में ।
चरत फिरत बछरन की रज में ॥
खेलत खेलत कान्हा आयो[4] ।
बछरन के गल सों लपटायो[5] ॥
प्रेम[6] समेत सबै पुचकारत ।
असुर कृष्ण ढिग आयो धावत ॥
रूप वच्छ को कियो अपार ।
"गधा चढे पांचो असवार" ॥२३ ॥

---

१. मु. कूदत कबहूँ पटकत । २ मु आप गिरें अरु ओर-न भटकत । ३. का. गदहा चढि० । ४. कां कान्हर आए । ५ कां लपटाए । ६. कॉ ही हो करि पुचकारत सबकों । दौरि असुर आयो है तबकों ।

बकासुर वध–

२४ "मुंह में राम बगल में छुरी"
बक के रूप दैत्य इक ठाढ़ो ।
देखि सरोवर के तट गाढ़ो ॥
ध्यान धरत है मानो मुनि ।
दीर्घ[1] रूप जनु पर्वत थुनि ॥
चोच पसारि दृष्टि है[2] बुरी ।
"मुख में राम बगल में छुरी" ॥२४॥

अघासुर वध –

२५ "कौडी नाहीं गांठ में करै ऊँट को मोल"
करै ऊँट कौ मोल कौल[3] करि व्रज में आयो ।
धरि अजगर कौ रूप कंस के अति मन भायो ॥
मन में सोचत बच्छ ग्वाल कों पहिले खैहों[4] ॥
कृष्ण और[5] बलदेव निगलि दोऊँ कों ऐहों[6] ।
ऐहों फिरि घर आपुने कियो कंस सों कोल ।
"कोडी नाहीं गांठ में करै ऊँट कौ मोल" ॥२५॥
२६ "लाहै आई डोकरी लागी गूदर खान"
लागी गूदर खान जबै अघ वदन पसार्‍यौ[7] ॥

---

१. कौं कैधों इह पर्वत की थुनि। २. कां. है। ३. मु करणजब
४. फा लैहौं। ५. मु देव। ६. कां. जैहै। ७ मु पसारा।

निगल[१] गयो सब ग्वाल और वछरा उर धारचो ।
पाछे तें श्रीकृष्ण दौरि मुख मांहि समाने ॥
कियो[२] रूप विस्तार परम गुरु चतुर सुजानें ।
जानें[३] हरि बोलै तबै तेरो लख्यो सयान ।
"लाडै आई डोकरी लागी गूदर खान" ॥ २६ ॥

वत्स हरण-

२७ गई छठी को बानियाँ गुड[४] दे पिन्नी खाय
गुड दे पिन्नी खाय आइ ब्रह्मा सब चोरे ।
बालक बच्छ अपार आनि[५] कीन्हें इक ठोरे ॥
भजन गयो सब भूलि भूलि माया लपटानो ।
उलट[६] आपनो मर्म और विसरायो ध्यानो ॥
ध्यान कृष्ण को छांडि के लइ दुर्बुद्धि[७] लगाय ।
"गई छठी को बानियां गुड दे पिन्नी खाय" ॥ २७ ॥

धेनुक वध-

२८ "जैसो देखौ साथरो तैसो पांइ पसारि" ।
तैसो पाइ पसार एक धेनुक हो ब्रज में ।

---

१. मु ग्वाल बाल अरु बच्छ लील धरि उदर मंझारा ।
२. मु. कीन्हों रूप अपार परमगुण चतुर सयाने । ३. मु जब हरि बोलियो तेरा । ४ कां गुरु दे पीना । ५ कॉ ढारि की ध ।
६ कॉ. उलटी आपन भ्रम्यो और० । ७. स माया ।

गदर्भ ही के रूप फिरत[1] मौ अपनी सज मे ॥
धोक[2] पकरे पांइ कृष्ण जू बहुत फिरायो ।
ऊपर दियो वगाइ ताड़ पर चौंडे छायो ॥
छायो खर कों देखि कें हरि जू कहत पुकार ।
"जैसो देखो साथरो तैसो पाइ पसार" ॥२८॥

काली दमन–

२६ "लेहु परोसिन झोंपडा नित उठ करती रारि"
नित उठ करती रार वारि जमुना के काली ।
जहं[3] कूद हरि जाइ दयई दीनो वनमाली ॥
कुटुम्ब[4] सहित दियो काढ़ि वाढ़ि आँनद चित्त चायन ।
निर्मल जल कारि कान्ह ग्वाल प्यावत हैं गायन ।
गायन कों लखि कहत[5] हैं सबै नाग की नारि ।
"लेहु परोसिन झोंपड़ा नित उठ करती रारि" ॥२६॥

प्रलम्ब वध—

३० महता ढुरे पयार में को कहि वैरी होय ।
को कहि वैरी होय असुर एक ब्रज[6] में आयो ।

---

१. कां रहत है। २. मु. पकड तालु के पाँइ। ३ कां. तहां कूंदि हरि याहि दंड। ४. मु. काढ़ दियो सखि सहित बढ़ो आनन्द। ५. मु. के सबै कहैं नाग की रार। ६. कां. इक आयो हरि के।

नाम प्रलम्ब छिपाइ सखा को रूप बनायो ॥
चढ़ाचढ़ौवल खेल तहां खेलत है हरिबल ।
लिये राम उचकाइ कान्ह सब जानि गये छल ॥
छल सों कृष्णा बतावही राम लखो इह कोय ।
"महता दुरे पयार में को काहि बैरी होय" ॥ ३० ॥

दावानल पान—

३१ ढाक चढ़त बारी गिरै करै राव सों रोस
करैं राव सों रोस असुर कितने ही आए ।
गाँय चरावन देखि कृष्णा कों कंस पठाए ।
दावानल दइ लाहि आइ मुंजाटवि बन में ।
चहुं दिसि तें परिजरी असुर गिरि जरियो तृन मे ॥
तृन में देत सबै जरे रहे देत हैं हरि दोस ।
"ढाक चढ़त बारी गिरै करै राव सों रोस" ॥३१॥

यज्ञपत्नी प्रसङ्ग—

३२ खाएँ पिए बधावनों सिर चुपरे त्यौहार
सिर चुपरे त्यौहार यज्ञ पतनीं जब आई ॥

---

१. कां. के रूपहिधारिकैं । २. मु. ग्वालन संग हर रोज चढौवल खेलत हरि बल । ३. मु. कान्ह । ४. मु. बताइयो राम कह्यो यह कोय । ४ मु. लग गई तबै मुंजारी० । ५. मु. चहूँ ओर परि-जारि असुर सब जरि तृन में । ३. मुं. तृन में जारे सब असुर वे दैं हरि कों दोस ।

अपुने पति कों बंचि सोचि[1] जिय हरि पै धाई।
सामग्री बहु भांति अखिल[2] बालक मिलि खाए।
भोजन करि बलदेव कृष्ण मन[3] अति सुख पाए॥
पाए सुख कों ग्वाल[4] सब कहत बात व्यौहार।
"खाए पिये बधावनों सिर चुपरे त्योहार"॥ ३२॥

गोवर्धन लीला--

३३ "लरिका रोवें मांड कों मांगें पितर सराध"
मागें पितर सराध साध कें करत[5] रसोई।
जसुमति रोहिनि आदि तहां छूवै नहीं कोई॥
करत इन्द्र बलि हेतु कृष्णजी ता छिन आए।
भोजन देहै कौन जहां पानी नहिं पाए॥
पाए दुख कहि नन्द सों सुनिए वृद्ध[6] अगाध।
"लरिका रोवे मांड कों मांगे पितर सराध"॥ ३३॥

३४ "आयो[7] नाँग न पूजिये बाँबी पूजन जाय"
बाँबी पूजन जाय राय नन्द हिं हरि बोलें।
घर घर बहु पकवान होत हैं करत किलोलें॥
कहौ कहा इह रीति[8] तबै श्रीनन्द बखानैं[9]।
सुरपति कों बलि देत सुनत[10] हरि क्रोधहि[11] आनैं।

१. मु. सोचिजे हरि०। २. मु सकल। ३. मु. जी।
४. मु. ग्वालिनी बात कहत०। ५. मु. करें। ६. कां. वुद्ध।
७. मु. नागन पूजै आयो घर बाम्बी पूजन जाय। ८. कां. हेत।
९. मु. बखानी। १०. मु. तबै। ११. मु. क्रोधै आनी।

आन हमारी मानिकें सब पूजो गिरिराय ।
"आयो नाँग न पूजिये बाँवी पूजन जाय" ॥ ३४ ॥

३५ "सीखे"[१] बेटा नाउ कौ कटै बटोही जान" ।
कटै बटोही जान कंस[२] इन्द्रहिं पठयो कहि ।
तेरी बलि कों मेटि कृष्ण दीनी पर्वत लहि ॥
गाजहि[३] क्यों न निसंक मेघ आतंक[४] छांड करि ।
ब्रज कों देहु बहाइ चाहि[५] मेरे वचन हि धरि ॥
धरि[६] मन में दुहु बात कों मन में[७] करि अनुमान ।
'सीखे बेटा नाउ कौ कटै बटो ही जान' ॥ ३५ ॥

इन्द्रकोप—

३६ "जाके सिर पर बोझ है सोई करै निबाह"
सोई करै निबाह इन्द्र कोप्यो[८] जब भारी ।
महा प्रलय के मेघ सुनो[९] यह वचन उचारी ॥
व्रज कों देहु बहाइ सुनत घन अति घुमड़ाये ।
बरसत मूसलधार देखि हरि गिरिधर[१०] आए ॥

---

१. कां. तोनाऊ जो सिखि है कटै वटाऊ जानि । २. कंसने इन्द्र को भेजा यह उपाख्यान भागवत पुराण का नहीं है ३. मु. गरजै । ४. मु. मन्डल को रचकर । ५. मु. शक्र मम वचन चित्त धरि । ६. मु. दोउ बात को धारि के । ७. कां. लखो लाभ मम पानि । ८. मु. की पूजा भारी । ९. मु. सुनत । १०. कां. गिरि पर आए ।

आए कर परवत धर्‍यो मनमें अधिक उछाह ।
"जाके सिर पर बोझ है सोई करै निबाह ॥" ३६

इन्द्र-क्षमायाचना—

३७ "ज्यों ज्यों भीजै कामरी त्यों त्यों भारी होय" ।
त्यों त्यों भारी होय इन्द्र अपराध किये तें ।
कहत गुरू समुझाइ मूढ़ तू समुझ हिये तें ॥
लै सुरभी कों साथ माथ[1] नइ हाथ जोरि कें ।
पर्‍यो चरन तर[2] जाइ कृष्ण घन नव किसोर के ॥
नवकिसोर के पांइ[3] मह तजि विलम्ब द्दग रोय ।
ज्यों ज्यों भीजै कामरी त्यों त्यों भारी होय ॥३७॥

३८ "नाज बोहरा लै गयो भुस लै गई बयारि" ।
भुस लै गई बयारि इन्द्र सुरभी लै पूज्यो[4] ।
सिंहासन ध्वज छत्र चमर दे[5] हरि कों कूज्यो[6] ॥
सक्र विदा ह्वै गयो तबै सब बालक दौरे ।
किनहू लीन्हो छत्र[7] किनहु सिंहासन चोरे ॥
चोरि लै गये ग्वाल सब रहे जु[8] कृष्ण निहारि ।
"नाज बोहारा लै गयो भुस लै गई बयारि" ॥३८॥

---

१. मु नाय सिर । २. मु. पग । ३. मु. चरन गहि तँह बिलम्ब० । ४. मु. पूजौ । ५. मु लै । ६ मु कूजो । ७ कां. लीयो छत्र चंवर ८. कां कहियों ।

रासक्रीड़ा--

३९ "जग में[1] देखी रावरे मुख देखे की प्रीति"
मुख देखे की प्रीति रीति रस रास रच्यो है।
ताल[2] मृदंग उपंग कृष्ण पिय खेल मच्यो है॥
भये जु अन्त धान प्रानप्रिय संग लई है।
ढूंढति नवद्रुम[3] बेलि गोपिका विकल[4] भई है॥
विकल[5] भई जब गोपिका हरि प्रगटे रस रीति॥
"जग में देखी रावरे मुख देखे की प्रीति" ॥३९॥

अंबिका-पूजन—

४० "दुधार गाइ की लात हु भली"।
देवी के दरसन कों धाए।
नन्दादिक ब्रजवासी छाए[6]।
तहां नन्द कों निगिल्यो[7] सर्प।
क्यों हू मारत[8] घटै न दर्प॥
तब श्रीकृष्णचन्द्र तहँ आए।
मारि चरन सों स्वर्ग पठाए॥
कहत सर्प मनकामना फली।
'दुधार गाइ की लात हु भली' ॥४०॥

---

१ का. कहति ग्वालिनी रिस भरी मुख। २ मु. कालिंदी के नीर तीर बलवीर नच्यो है। ३ मु. हैं द्रुम। ४ का विवस ५ का. भई जु वे विह्वल सबै हरि.। ६ मु आए। ७. मु. दंश्यो। ८ मु किये घटे नहि,।

शंखचूड़ वध—

" नाऊ बार कितेक हैं, आगे परि हैं आइ "।
आगे परि हैं आइ एक दानव ब्रज आयो।
शंखचूड़ अति क्रूड़ दौरि ब्रज वधू चुरायो।
लखि पायो[1] घनस्याम राम पटक्यो जब भाग्यो।
माथे तें मनि लई, असुर तब बूझन[2] लाग्यो
बूझन[3] लाग्यो स्याम सो मनि को रूप बनाइ।
" नाऊ बार कितेक हैं, आगे परि हैं आइ " ॥४१॥

व्योमासुर वध—

४२ " आते कों[4] सहजा कहै जाते को[5] कहै मुक्त "।
जाते कों कहै मुक्त एक व्योमासुर आयो[6]।
कियो सखा कौ रूप कूप ननु[7] तृन सों छायो॥
खेलत[8] हैं जहँ ग्वाल बाल तहँ आप छुपायो॥
गुफा नेर सब जाइ तबै हरिजू गहि[10] पायो॥
पायो चल्यो छुड़ाइके गिर्यो धूरि[11] मुख मुक्त।
" आते कों सहजा कहै जाते कों कहै मुक्त " ॥४२।

१. मु आप। २. मु बोलन। ३ मु लाग्यो बूझन।
४. मु. सों० रा कों सहजादा। ५ मु तो। ६. मु. छानो।
७ मु. मानो तृण छानो। ८ कौं जहँ खेलत हैं ग्याल ग्वाल मिलि बज्जा चुरायो। ९. कां भरी। १० मु. लखि। ११ मु. धूर।

वृषभासुर-बध—

४३ "जो गदहा हर जोतिये तो क्यों लीजै बैल"
तो क्यों लीजै बैल खेल में सुबल[१] हकारे।
वृषभासुर कों आजु लखों हम ही गहि-मारें॥
कहा करेंगें कृष्ण और बलदाऊ बीरा।
सींग[२] पकरिकें पटकि देउँगो हों रन धीरा॥
धीरा[३] ह्वै बोल्यो तबै मधुमङ्गल अति छैल।
"जो गदहा हर जोतिये तो क्यों लीजै बैल" ॥४३॥

केशी-बध—

४४ "हँसिया निगलत ही सुख पै है"
केसी दैत्य[४] जबै ब्रज आयो।
देखत सिगरो बन[५] थहरायो॥
हिनहिनात घोरा के रूप।
पठयो है मथुरा के भूप॥
तब श्रीकृष्ण हँसत[६] वहां आए।

---

१ मु. सबल हकारे। वृषभासुर तहँ आइ सबन कँह धरि धरि मारे। कहा करेगो कृष्ण। २.मु सींगन बर धरि पटकि ३. रनधीरा बहु ग्वाल कहे है मधु०। ४ मु. दानव ब्रजमें। ५. मु. सवरो ब्रज। ६ मु चन्द्र तहँ०।

याके मुखमें हाथ समाए[1] ॥
उन[2] जान्यो हम याकों खैहैं ।
"हँसिया निगलत ही सुख पै हैं" ॥४४॥

कंस-वर्णन—

४५ "कोऊ रूख जहां नहीं तहां अरण्डे[3] रूख" ।
तहां अरण्डे रूख कूख जादव की प्रगट्यो ।
कंसराइ सुख पाइ विषय रस में[4] अति लिपट्यो ॥
अहंकार तन गर्व सर्व पर्वत ज्यों साजै ।
श्रीमथुरा के बीचं देसपति अधिक बिराजै ॥
राजै हरि जबलों नहीं श्रीजसुमति की कूख ।
"कोऊ रूख जहां नहीं तहां अरण्ड रूख" ॥४५॥

४६ "आवें जांइ सु हरि के लेखें ।
कोऊ[5] असुर जु ब्रज में आए ।
ते सब हरि जू मारि गिराए ॥
कहत कृष्ण ग्वालन सों पेखें ।
"आवें जांइ सु हरि के लेखें" ॥४६॥

१. मु. चलाए। २. मु. केसी कहै याहि हम खैहैं। ३. मु. अंड को। ४. मु. रस अति ही०। ५. मु. कई असुर ब्रज भी तए.।

वृषभासुर-वध—

४३ "जो गदहा हर जोतिये तो क्यो लीजै बैल"

तो क्यों लीजै बैल खेल में सुबल[१] हकारे।
वृषभासुर कों आजु लखो हम ही गहि-मारें॥
कहा करेंगें कृष्ण और बलदाऊ बीरा।
सींग[२] पकरिकें पटकि देउँगो हों रन धीरा॥
धीरा[३] ह्वै बोल्यो तबै मधुमङ्गल अति छैल।
"जो गदहा हर जोतिये तो क्यों लीजै बैल" ॥४३॥

केशी-वध—

४४ "हँसिया निगलत ही सुख पै है"

केसी दैत्य[४] जबै ब्रज आयो।
देखत सिगरो बन[५] थहरायो॥
हिनहिनात घोरा के रूप।
पठयो है मथुरा के भूप॥
तब श्रीकृष्ण हँसत[६] वहां आए।

---

१ मु सबल हकारे। वृषभासुर तहँ आइ सबन कँह धरि धरि मारे। कहा करेगो कृष्ण। २ मु सींगन बर धरि पटकि ३. रनधीरा बहु ग्वाल कहे है नधु०। ४ मु. दानव ब्रजमें। ५. मु. सबरो ब्रज। ६ मु चन्द्र तहँ०।

याके मुखमें हाथ समाए[1] ॥
उन[2] जान्यो हम याकों खैहैं ।
"हँसिया निगलत ही सुख पै हैं" ॥४४॥

कंस-वर्णन—

४५ "कोऊ रूख जहां नहीं तहां अरण्डे[3] रूख" ।
तहां अरण्डे रूख कूख जादव की प्रगट्यो ।
कंसराइ सुख पाइ विषय रस में[4] अति लिपट्यो ॥
अहंकार तन गर्व सर्व पर्वत ज्यों साजै ।
श्रीमथुरा के बीचं देसपति अधिक विराजै ॥
राजै हरि जबलों नहीं श्रीजसुमति की कूख ।
"कोऊ रूख जहां नहीं तहां अरण्डे रूख" ॥४५॥

४६ "आवें जांइ सु हरि के लेखें ।
कोऊ[5] असुर जु व्रज में आए ।
ते सब हरि जू मारि गिराए ॥
कहत कृष्ण ग्वालन सों पेखें ।
"आवें जांइ सु हरि के लेखें" ॥४६॥

---

१. मु. चलाए। २. मु. केसी कहे याहि हम खैहैं। ३. मु. अंड कौ। ४. मु. रस अति ही०। ५. मु. कई असुर व्रज भी तर.।

अक्रूरागमन--

' पिसनारी के [१] छोहरा चबेना कौ लाभ " ।
चबेना कौ लाभ कंस पठयो अक्रूरहिं ।
भयो महा आनन्द निरखि हरि-पद की धूरहिं ।
कंसराइ कौ काज दरस तिहिं हरि कौ पायो ॥
मन उतकंठित होइ तबै यह बचन सुनायो ॥
नायो सिर दग जल भरे देखत अम्बुजनाभ ।
" पिसनारी के छोहरा चबेना कौ लाभ " ॥४६॥

मथुरागमन--

" नातर तोहिं संघारि हों गुड़ दै कांने साह " ।
गुड़ दै कांने साह राय [२] चलि मथुरा आए ।
श्रीहरि अरु बलबीर [३] भीर सब सखा सुहाए ॥
दरवाजे में बसत रजक एक दृष्टि पर्यो तब ।
रंग रंग के बसन भरे [४] खर अनंत सहस सब ॥
सब ग्वालन मिलि हरि कहें बसन देहु करि चाह ।
" नातर तोहिं संघारि हों गुड़ दै कांने साह " ॥४८॥

---

१ कां के पूत कों चर्च नही कौ । २. मु चले मथुराजी ।
३, मु॰ बलदेव । ४. मु॰ भांति भांतिन पहिरे सब ।

रजक-वध--

४६ "रोवै कोउ मुडावनी कोऊ रोवै मूंड"।
कोऊ रोवै मूंड रजक कों जबै संघार्यो।
सखा सहित गोपाल लाल इह[1] वचन उचार्यो॥
जासों जैसा वसन वनै तैसो ही पहिरो।
अदल बदल करि लेहु जौन मन भावै गहरो।
गहरो मन मानै[2] जोई भरत रजक कौ रूंड॥
"रोवै कोउ मुडावनी कोऊ रोवै मूंड" ॥४६॥

कुब्जा-प्रसङ्ग--

५० "तेरे घाले घल[3] गये कांदा[4] खानी रांड"।
कांदा खानी रांड सांड सी मथुरा डोलै।
मारग[5] कोऊ मिलै सबन सों हँसि कें बोलै॥
इह[6] कुबिजा गुन हीन कंस[7] सैरंध्री लेखी।
कृष्ण देव बलदेव अरगजा लै मग देखी[8]॥
देखी कह व्रज-भक्त सब कियो कंस ग्रह[9] मांड।
"तेरे घाले घल गये कांदा खानी रांड" ॥५०॥

१. मु॰ लालने वचन। २. कां॰ मन माने नहीं मुए रजक को मुण्ड। ३. कां॰ घर। ४. मु॰ कांधा। ५. मु॰ मारग में कोउ मिलै सबन, सों हँसि हँसि बोलै। ६. मु॰ री। ७. मु॰ दीन सी अतिही देखी। ८. मु॰ पेखी। ९. मु॰ घर।

५१ "परखैया[1] कौ दोष कहा अपुनो खोटो दाम"।
अपुनो खोटो दाम राम श्रीकृष्ण पधारे[2]।
श्रीमथुरा के बीच, जाइ कुबिजा हि सँवारे[3]॥
लियो अरगजा घोरि[4] सबै ग्वालन अंग लाए।
झांकी[5] घातें दूत इहां[6] व्रज मांहि चलाए॥
बात सुनत सब गोपिका बोलत बचन सकाम।
"परखैया कौ दोष कहा अपुनो खोटो दाम"॥५१॥

कुवलिया-वध—

५२ "आगि लगंतें[8] झूपरें जो निकसै सो लाभ"।
जो निकसै सो लाभ कृष्ण बल मथुरा आए।
लख्यो कुवलियापीड ताहि गहि पूंछ फिराए।
दे पटक्यो ततकाल काल[9] कछु संक न कीए॥
कटि पट पीत लपेटि साथ[10] बलभद्र हिं लीए।
लीए दांत उखारिकें बोले[11] अम्बुजनाभ।
"आगि लगंतें झूपरें जो निकसै सो लाभ"॥५२॥

---

१. कां॰ कुबजा कों कहा दोस है अपुनो। २. मु॰ परस्पर। ३. मु॰ लीन्ही घर। ४. मु॰ छोरि सकल। ५. मु॰ तहँकी। ६. मु॰ यहाँ सो आनसुनाये। ७. कां॰ लाइक मिलि। ८. मु॰ लगंता झोपड़ा। ९. मु॰ कछु मन संक न लाए। १०. मु॰ संग बलदेव सुहाए ११. कां॰ बोलत।

चाणूर मुष्टिक वध--

५३ "तोहि बिरानी का परी तू अपनी[1] निरवेरि"
तू अपनी निरवेरि हेरि मुष्टिक चाणूरौ[2] ।
कृष्ण देव बलदेव लरत कौतुक भयो पूरौ[3] ॥
मुष्टिक कहत पुकारि सुनो चाणूर चित्त धरि ।
आडागीडी लाइ बांह गहि देहु[4] पटकि हरि ॥
हरि भरि तब चाणूर कहि हों अब लीन्हों घेरि ।
"तोहि बिरानी का परी तू अपनी निरवेरि ॥ ५३ ॥

कंस-वध प्रसंग—

५४ "बैल न कूद्यो[5] कूदी गौन" ।
कंसराय बैठ्यो सिंहासन ।
देख्यो मल्ल गिरे[6] निज दासन ॥
जुद्ध करन भाई[7] दोउ ठाढे ।
गोप सखन सों आनन्द बाढ़े ॥
कूदि[8] कंस उछल्यो अति साखे ।
महा क्रोध हिरदे में राखे ॥
श्रीवसुदेव देवकि हिं[9] पकरो ।
नन्दराय जसुमति कों जकरो[10] ॥

---

१ कां० अपनी जु निवेर । २ मु० चाणूरै । ३ मु० भए पूरे । ४ मु० दै पटको । ५ मु० कूदै कूदी । ६ मु० परो । ७ मु० भैया । ८ कां० कूद्यो । ९ कां० देवकी जकरो । १० कां० सकरो ।

कहत 'नन्द' देखो ये बातें ।
मेरो सुत लायो करि बातें ॥
उलटी हम ही ऊपर टौन[१] । 'बैल न कूद्यो कूदी गौन'॥५४॥

५५ 'टट्टू मारै ताजी त्रास ।
रङ्गभूमि आए दोउ भैया ।
मानहुं ए सिंहनि के छैया ॥
पटके[२] मुष्टिक अरु चाणूर[३] ।
शल तोशल गहि डारे दूर ॥
मार्‍यो[४] कूट और सब भाजे ।
राम[५] कृष्ण दोउ अधिक विराजे ॥
तबै कंस की टूटी आस । 'टट्टू मारै ताजी त्रास ॥ ५५ ॥

५६ 'डेढ बकाइन देखिये मीयां बैठ बाग ।
मियां बैठे बाग नाग[६] काली जब नाथ्यो ।
अघ[७] बक केसी व्योम रजक धरि पटक्यों हाथ्यो ॥
तब बोल्यो[८] नृप कस अरे, इत कोऊ है रे ।
राम कृष्ण कों पकरि जकरि नन्दादिक घेरे ॥
घेर्‍यो आपुहिं काल कौ रह्यो अकेलो काग ।
"डेढ़ बकाइन देखिये मीयां बैठे बाग ' ॥५६॥

---

१ कां० ठौन । २ मु० मारे । ३ मु० चंडूर । ४ मु० मारे कूटे अरु मु० अधिक कृष्ण बलदेव विराजे । ६ मु०जबै काली कों नाथो ७ मु० मथुरा भीतर सुनत सबन मिल टोरो माथों । ८ कां० बोलत है कंस ।

५७ "सात मामा कौ भानजो सदा मरै[1] है भूख ।"

सदा मरै है भूख कृष्ण मनि प्रगटे जवतें ।
भ्रात सात ही कंस वैरु कीन्हों[2] है तवतें ॥
मार्यो चाहै ताहि[3] चित्त दै असुर पठैवो ।
भूलि गयो सब राज अन्न पानी कौ खैवो ॥
खैवो छांड्यो कृष्ण डर[4] वचन सुनायो ऊख ।
"सात मामा कौ भानजो सदा मरै है भूख ॥५७॥"

उग्रसेन-राज्याभिषेक—

५८ "बूढ़ौ वरद पाट कौ नाथ ।"

जवै कंस कौ कियो संहार ।
सब जादव कौ करि उपकार ॥
उग्रसेन कों दीन्हों राज ।
नीकों सोमित[5] कर्‌यो समाज ॥
ढोरत[6] चँवर छत्र धरि माथ ।
"बूढ़ौ वरद पाटकौ नाथ ॥५८॥"

५६ "लहंगा टाट पाट की तनी ।"

उग्रसेन बैठ्यो सिंहासन ।

---

१ कां० रह्यो है । २ कां० कीयो अति तवतं । ३ कां० निस
४ कां० जू वैनन सुनै पीयूख । ५ मु० सोहै सबै । ६ मु० ढोरै ।

प्रफुल्लित बचन कहत सब ही सन[१] ॥
भांति भांति के कपरा पहिरैं ।
महक[२] कपूर अरगजा गहरैं ॥
बूढ़ो[३] मुख सोभा भल बनी ॥
"लहँगा टाट पाठ की तनी ॥ ५९ ॥"

सान्दीपनी प्रसङ्ग—

६० "गाडर आनी ऊन कों बांधी चैर कपास ।
बांधी चैर कपास कृष्ण संदीपनि सों पढ़ि ।
गुरु बहु[४] ज्ञान कराइ दच्छिना मांगि लई रढ़ि ॥
गुरु मांग्यो निज पुत्र तबै हरि यमपुर आए ।
बालक कों लै आइ[५] गुरू कों जाइ दिखाए ॥
खायो[६] बालक काल कौ बोलत यम तजि आस ।
"गाडर आनी ऊन कों बांधी चैर कपास ॥ ६० ॥

उद्धव-व्रजागमन—

६१ "जैसइ कन्ता घर रहे तैसइ रहे[७] बिदेस" ।
तैसे रहे विदेस जबै ऊधौ पठयो व्रज ।

१. कां० पासन । २. कां० बहुत सुगन्ध अरगजा लहरैं ३ कां० बूढ़े०" नहिं । ४ कां० सों करि व (विज्ञप्ति दच्छिना०) ५. मु० आइ धाइ गुरु कों दिखराए । ६. मु० खाए बालक काल के लाए यम । ७. कां० गए ।

देखि लता द्रुम छांह[1] निकट सरिता धरती रज ॥
गोपिन सों मिलि कहत जोग की विधि समुझावै ।
इन के मनमें नाहिं लवै मिलि हरि कों गावै ॥
गांठ गयो फिर आपुने वृथा भयो संदेस ।
" जैसेई कन्ता घरे रहे तैसेइ रहे विदेस " ॥ ६१ ॥

जरासन्ध प्रसङ्ग—

६२ " कौड़ी नांही गांठ में चले बाग की सैल ।
चले बाग की सैल गैल चलि मथुरा आए[2] ।
जरासन्ध सब घेरि लिये सेना मन भाए ॥
कृष्ण देव बलदेव तहां अति प्रबल विराजे ।
देखत तिनकों रूप छोड़नी दल सब भाजे ।
भाजे फिरि आवैं निबल समुझत नाहिन[3] घैल ।
" कौड़ी नांही गांठ में चले बाग की सैल " ॥ ६२ ॥

द्वारका गमन—

६३ लगि[4] जैहै तो तीर है, नातर तुक्का जानि ।
नातर तुक्का जानि बार अष्टादश आयो ॥
जरासंध लियो घेरि काल जवनौ उठि धायो ॥

---

१. कां० निकट जहां सरिता । २. कां० आवै । भावै ।
३. मु० नांही । ४. कां० लागै है तो ।

पुरी[1] द्वारका रची कुटुंब सब[2] ह्यां पहुँचायो ।
कृष्ण और बलदेव दोउ लरिवे कों आयो[3] ॥
आयो[4] लरिवे भाजियो राम कहत परमानि[5] ।
"लगि जैहै तो तीर है नातर तुक्का जानि ॥ ६३ ॥

मुचुकुन्द प्रसंग —

६४ "देत न बनै बुनाबुनी हर्यो लगावै[6] सूत ।
हर्यो लगावे सूत दौरि, मुचकुन्दहि देखै[7] ॥
काल जबन कों जारि डारि पट पीत विशेषै[8] ॥
तैं[9] कीन्हों है राज सुनो मुचुकुन्द अवनि[10] पर ।
पाप होइ तब दूरि[11] भूरि द्विज देह लेहि घर ॥
धरि सरीर उद्धारियो नीच कितेऊ भूत ॥
"देत न बनै बुनाबुनी हर्यो लगावै सूत ॥६४॥

६५ " कौडीमार बिटौरा चूकै " ।
अघ बक वच्छासुर-से तारे ।
कंस मल्ल[12] गज-से उद्धारे ॥

१- कां० देखि । २- मु० तँह सब । ३- मु० धायो । ४-मु० आगे लरै न भाजियो । ५- कां० मन मानि । ६- मु० लगावत । ७- मु० देखो । ८- मु० विशेषौ । ९- मु० तैने कीन्हो राज० । १०- कां० वैन तरि । परि । ११- मु० दौरि ब्रज देह० । १२- मु० मत्त गज कों० ।

मुचुकुन्द[1] प्रत्यच्छ कियो है दरसन ।
मुक्ति काज वह लाग्यो तरसन ॥
तब[2] ही भक्त सबै मिलि कूके ।
"कौड़ीमार बिटौरा चूके" ॥ ६५ ॥

बलदेव-व्याह प्रसङ्ग--

६६ "सोइ नारि सब तें बड़ी जाकी कोठी ज्वारि" ।
जाकी कोठी ज्वार एक रैवत मौ राजा ॥
लिये रेवती संग[3] द्वारिका आयो काजा ॥
व्याहि लई बलदेव सेन नीके कें[4] करई ।
बुद्धि अपार उदार रेवती अति गुन गरई ॥
गरई गुन[5] बलभद्र लखि व्याही और नँ नारि ।
"सोइ नारि सब तें बडी जाकी कोठी ज्वारि" ॥ ६६ ॥

६७ "जे हरियाइ गौ[6] चरें ते क्यों चरें पयारि ॥
ते क्यों चरें पयारि नृपति भीषम की कन्या ।
दान धर्म गुन शील अधिक देखी वह धन्या ॥
करत व्याह की बात रुक्म सिसुपालहिं दैहै ।
जरासंध सो हितू सुनत[7] अति ही सुख पैहै ॥

१ मु० दै प्रत्यच्छ मुचकुन्दहि दर्सन । २ मु० ताही वेर भक्त सब कूके । ३ कॉ० साथक आयो द्वारिका काजा । ४ मु० नीके वह । ५- मु० गुन ही गुन वलभद्र जी और न व्याही नारि । ६- मु० कों । ७- कां० परसि ।

पुरी[१] द्वारका रची कुटुंब सब[२] ह्यां पहुँचायो ।
कृष्ण और बलदेव दोउ लरिवे कों आयो[३] ॥
आयो[४] लरिवे भाजियो राम कहत परमानि[५] ।
"लगि जैहै तो तीर है नातर तुक्का जानि ॥ ६३ ॥

मुचुकुन्द प्रसंग —

६४ "देत न बनै बुनाबुनी हरयो लगावै[६] सूत ।
हरयो लगावे सूत दौरि, मुचकुन्दहि देखै[७] ॥
काल जवन कों जारि डारि पट पीत विशेषै[८] ॥
तें[९] कीन्हों है राज सुनो मुचुकुन्द अवनि[१०] पर ।
पाप होइ तब दूरि[११] भूरि द्विज देह लेहि घर ॥
धरि सरीर उद्धारियो नीच कितेऊ भूत ॥
"देत न बनै बुनाबुनी हरयो लगावै सूत ॥६४॥

६५ " कौडीमार बिटौरा चूकै " ।
अघ बक वच्छासुर-से तारे ।
कंस मल्ल[१२] गज-से उद्धारे ॥

१- कां० देखि । २- मु० तँह सब । ३- मु० धायो । ४-मु० आगे लरै न भाजियो । ५- कां० मन मानि । ६- मु० लगावत । ७- मु० देखो । ८- मु० विशेषौ । ९- मु० तैने कीन्हो राज० । १०- कां० वैन तरि । परि । ११- मु० दौरि व्रज देह० । १२- मु० मत्त गज कों० ।

स्यमन्तक मणि प्रसंग—

७० "अपनी ओर निबाहिये बा की वह जानै"।
मणि कौ लग्यो कलक कृष्ण तब[1] पर्वत पैठे ।
जामवन्त कों दण्ड दियो बाहिर बल जैठे ॥
जामवती कों ब्याहि आइ मणि दीनी वाकों।
सत्राजित[2] खिसियाइ लाइ दीन्ही भामा कों ।
कहत तबै बलदेव कृष्ण इह कोऊ मानै ।
"अपनी ओर निबाहिये बा की वह जानै' ॥७०॥

सत्यभामा प्रसंग—

७१ "पानी में को बास है[4] करै मगर सों बैर" ।
करै मगर सों बैर, टेरि सत्राजित लीनो ।
सब पंचन के बीच कृष्ण मनि बाकों दीनो ॥
लै आए घर मांहि बांह[5] गहि तिय सों कहि तब।
सतभामा[6] कों ब्याहि दीजिये कृष्णचन्द्रहिं अब ॥
अब रहिबो हमरौ इहां महाबली हरि हेर ।
"पानी में को बास है करै मगर सों बैर" ॥७१॥

१- मु० परबत में पैठे। २- मु० दी। ३- मु० सत्राजीत खिसाइ लाइ दीनी बामा,कों ४- कां० बास करि मंगर ही सों०। ५- कां० बात यह तिय सों कही। ६- मु० अब सतभाम ब्याहि दीजिये कृष्णचन्द्र हीं।

पैहों श्रीहरि देवकों रुक्मिनि कहत पुकारि ।
"जे हरियाइ गौ चरैं ते क्यों चरैं पयारि ॥ ६७ ॥

६८ "छांडे[१] बनै न संग्रहे ज्यों कुल मांहि कपूत ।
ज्यों कुल मांहि कपूत नृपति भीषम यह[२] सोचै ॥
रुक्मिनि रीझी[३] कृष्ण इहे रानी मिलि लोचै ॥
तबही आयो रुक्म कहे[४] सिसुपालहिं दैहों ।
कह्यो हमारो[५] करो नहीं बन कों उठि जैहों ॥
जैहों, सुनि भीषम कहे रुक्म भयो अति[६] धूत ।
"छांडे बनै न संग्रहे ज्यों कुल मांहि कपूत ॥ ६८ ॥

रुक्मणि-हरण--

६६ "किस बिरते पर तत्ता पानी ।
रुक्मिणि हरि लै चलै गोपाल ।
रुक्म दौरि आयो तत्काल ॥
कहत सयन सों[७] रुक्मनि[८] लाऊँ ।
ठाढ़े रहो नेकु फिरि आऊं ॥
जरासन्ध इह बात बखानी ।
"किस विरते पर तत्ता पानी ॥६६॥

---

१ मु. छांडे गहे बनै नहीं ज्यों कुल मांहि कपूत । २ मु. वहु । ३- कॉ० दीजे । ४- मु. कहत । ५- कॉं. करो नहिं आजु अबै वन. । ६- मु. है धूत । ७- मु. सन । ८- कॉं. दुलहिनि

नरकासुर वध —

७४ "जैसो देखो[1] चोल्हरा तैसो बन्यो विसाह" ।
तैसो बन्यो विसाह प्राग ज्योतिषपुर आए ।
सुर कौ कियो संहार कृष्ण मनि कोट ढहाए[2] ॥
नरकासुर कों मारि राजकन्या[3] जु छुड़ाई ।
सोरह सहस उदार एक सौ हरि पैं आई ॥
आई मोहित जानि हरि सबसों कियो विवाह ।
"जैसो देखो चोल्हरा तैसो बन्यो विसाह" ॥ ७४ ॥

ऊषाहरण -

७५ "घी सोधों जो देखिये कहि[4] गोवर सों कोथ" ।
कहि गोवर सों कोथ जवै बानासुर लरियो ।
ऊषा के परसंग कृष्ण जू सब बल हरियो ॥
तब ही करत पुकार आइ सब बात भली हो[5] ।
मोकों[6] करी सहाय रुद्र तुम[7] महाबली हो ॥
बली रुद्र ऊषा कहै बाणासुर मा (महा?) थोथ ।
"घी सोधों जो देखिये कहि गोवर सों कोथ" ॥ ७५ ॥

१- मु० मिलि गयो चौंहरा तैसो मिल्यो विसाह । २- मु० ˜ । ३- मु० जाइ कन्या । ४- मु० कर । ५- मु० है । ० मेरी करी । ७- मु० तू महाबली है ।

७२ "नांचै[१] कूदै बांदरा टूक जोगना खाय" ।
टूक जोगना खाय स्यमन्तक मणि जब हरियो ।
सतधन्वा अक्रूर और[२] कृतवर्मा करियो ॥
खोज करत ही कृष्ण गए अक्रूर लई मनि ।
काशी पहुंचे जाइ दानपति ह्वै बैठ्यो धनि ॥
धनी बात अक्रूर की सतधन्वा मरि जाय ।
'नाचै कूदै बांदरा टूक जोगना खाय" ॥७२॥

अनिरुद्ध प्रसंग—

७३ "भेड तो माती देखिये[३] मेंगनी माती देख" ।
मेंगनी माती देख व्याह अनिरुद्ध भयो जब ।
जूआ[४] खेलत रुक्म और बलदेव राज सब ॥
जीतत है बलदेव, झूठ कहि रुक्म जतावै[५] ।
हसत कलिंग निहारि दांत काढत सुखपावै ॥
पावै[६] सुक्ख कलिंग के हृदय राखि परवेख ।
"भेड तो माती देखिये मेंगनी माती देख" ॥७३॥

१- मु० नाच कूद बन्दर मरे। २- मु० कृत्तवर्मा ये टरियो। ३-कॉं० भेड़ है। ४- मु० जब खेले हैं रुक्म० । ५-कां० जितावे। ६- कॉं० पॉव जु पटकि कलिङ्ग के कहियो राम परेखि देखि।

नरकासुर वध —

७४ "जैसो देखो[1] चोल्हरा तैसो बन्यो विसाह" ।
तैसो बन्यो विसाह प्राग ज्योतिषपुर आए ।
मुर कौ कियो संहार कृष्ण मनि कोट ढहाए[2] ॥
नरकासुर कों मारि राजकन्या[3] जु छुडाई ।
सोरह सहस उदार एक सौ हरि पैं आई ॥
आई मोहित जानि हरि सबसों कियो विवाह ।
"जैसो देखो चोल्हरा तैसो बन्यो विसाह" ॥ ७४ ॥

ऊषाहरण -

७५ "घी सोधों जो देखिये कहि[4] गोवर सों कोथ" ।
कहि गोवर सों कोथ जबै बानासुर लरियो ।
ऊषा के परसंग कृष्ण जू सब बल हरियो ॥
तब ही करत पुकार आइ सब बात भली हो[5] ।
मोकों[6] करी सहाय रुद्र तुम[7] महाबली हो ॥
बली रुद्र ऊषा कहै बाणासुर मा (महा?) थोथ ।
"घी सोधों जो देखिये कहि गोवर सों कोथ" ॥ ७५ ॥

१- मु० मिलि गयो चोंहरा तैसो मिल्यो विसाह । २- मु० वहाये । ३- मु० जाइ कन्या । ४- मु० कर । ५- मु० है । ६- मु० मेरी करी । ७- मु० तू महाबली है ।

नृगोद्धार--

७६ "बैठे' तें बेगार भली है"।

बैठ हुते द्वारिका बीच ।
राम कृष्ण सुखरस सों सींच ॥
बोलत सब जादौ सों बैन ।
नृग कों चालिके दीजै चैन ॥
बाके मन की बात फली है ।
"बैठे तें बेगार भली है" ॥ ७६ ॥

पुड्रक वध—

७७ "मार वफाती खीचरी यह घर आज न काल" ।
यह घर आज न काल, चाल खोटी इन पकरी ।
पुंड्रक[1] को पति वासुदेव तिहिं लागी जकरी[2] ॥
है नारायण कृष्ण, चारभुज, गरुड़[3] बनायो ।
लरिवे कों गोविन्दचन्द कों दूत[4] पठायो ॥
दूत पठै बलदेव कहँ[5] दिना चारि लै माल ।
"मार वफाती खीचरी यह घर आज न काल" ॥७७॥

---

१. कॉ० ठाली । २. मु० पांडुन कों वनवास देव लागी जहँ जकरी ? । ३. मु० गढ़ जु । ४ मु० दैत्य । ५. कॉं० कहि ।

सुदर्शन वध —

७८ " नए चिकनियां वगल में ईंट " ।
जब पुंड्रक कों डार्यो मारि ।
कासीपति तब रह्यो निहारि ॥
नाउं सुदच्छिन[१] लरिवे आयो ।
सेना साथ तनक-सी[२] लायो ।
जैसो बेटा तैसी छींट ।
" नए चिकनियां वगल में ईंट " ॥ ७८ ॥

द्विविद वध—

७९ " हरिहाई के सग[३] में कपिलाहू कौ नास" ।
कपिलाहू कौ नास, पास[४] देख्यो निरधारी ।
राम-भक्त है द्विविद महा वनचर उपकारी ॥
नरकासुर के संग बहिर्मुख होइ गयो है ।
कृष्ण देव बलदेव दुहूँ सों[५] वैर भयो है ॥
वैर भयो है कृष्ण सों कहत वचन[६] परगास ।
" हरहाई के संग में कपिलाहू कौ नास " ॥ ७९

---

१ मु० सुरच्छ लरिवे कों० २. मु० नेकसी । ३ मु० साथ में कपिलाई को० ४ मु० तवै । ५ मु० स र । ६. मु० पच्च ।

नृगोद्धार—

७६ "बैठे' तें बेगार भली है"।

बैठ हुते द्वारिका बीच ।
राम कृष्ण सुखरस सों सींच ॥
बोलत सब जादौ सों बैन ।
नृग कों चालिके दीजै चैन ॥

बाके मन की बात फली है ।
"बैठे तें बेगार भली है" ॥ ७६ ॥

पुड्रूक वध—

७७ "मार वफाती खीचरी यह घर आज न काल" ।
यह घर आज न काल, चाल खोटी इन पकरी ।
पुंड्रक[2] कौ पति वासुदेव तिहिं लागी जकरी ॥
है नारायण कृष्ण, चारभुज, गरुड़[3] बनायो ।
लरिवे कों गोविन्दचन्द कों दूत[4] पठायो ॥
दूत पठै बलदेव कहँ[5] दिना चारि लै माल ।
"मार वफाती खीचरी यह घर आज न काल" ॥७७॥

---

१. काँ० ठाली । २. मु० पांडुन कों वनवास देव लागी जहँ करी ? । ३. मु० गढ़ जु । ४ मु० दैत्य । ५ काँ० कहि ।

जरासन्ध वध—

८२ " सांप जु मार्‍यो चाहिये दियो पाहुने हाथ " ॥
दियो पांहुने हाथ, नाथ श्रीकृष्ण पधारे ।
अर्जुन भीमहिं संग[१] लियें तब ही ललकारे ॥
जरासन्ध सों[२] मांगि तबै रन कियो सुहायो ।
भीमसेन बलवन्त सिंह कों मारि गिरायो ॥
आइ[३] कृष्ण ठाड़े भए लै अर्जुन कों साथ ।
" सांप जु मार्‍यो चाहिये दियो पाहुने हाथ" । ८२ ॥

शिशुपाल वध--

८३ " बरस दिना के कातनें एकै कपरा होय" ।
एकै कपरा होय, खोइ घर चेदिप[४] आयो ।
राजसूय के बीच बक्यो गारी मन भायो ॥
एकै आसन बैठि गारि सत दीनी हरि को ।
एकै गारी मानि आनि सिर काट्यो अरि को ।
सिर[५] काट्यो शिशुपाल कौ कहत बैन मुख जोय ।
बरस दिना के कातनें एकै कपरा होय " ॥ ८३ ॥

---

१. मु. लियो संग सब है लल० । २. मु० कों मारि गरद कीयो जु सुहायो । ३. कॉ० राइ कृष्ण ठाड़े रहे लै० । ४ मु० चेदी । ५ कौं० धरि काट्यो सिर धार सों कहत० ।

साम्ब-ब्याह प्रसङ्ग--

८० "कूआ[1]-पानी, कृपन-धन गल बांधे निकसाय[2]।
गल बांधे निकसाय, आइ हथिनापुर मांही।
दुर्योधन की सुता कृष्ण-सुत हरिलै जांही।
पकरयो जब [3] सुत जाइ भद्रबल कोप कियो जब।
ले कुन मानी आन खेंचि हल सों नगरी तब।
तब [4] पकरे बल-चरन कों दुलहा दुलहनि लाय।
"कूआ-पानी कृपन-धन गल बांधे निकसाय"। ८०॥

नारद कौतुहल -

८१ "कै गुर जाने कोथरा कै बनियां की हाट"।
कै बनियां की हाट जबै नारद रिसि आवे।
देखि द्वारिका चरित[5] कृष्ण को विस्मय पावे॥
घर घर डोलत फिरे [6] तहां गोविन्द निहारे।
तब सरनागति होइ कृष्ण सों वचन उचारे॥
वचन उचारे कृष्ण सों अद्भुत तुमरो[7] ठाट।
"कै गुर जाने कोथरा कै बनियां की हाट"॥ ८१॥

---

१ कां० कुवटा-। २. मु० निकराय। ३ कां० सुनि कें साम्ब आनि बल जानि सिस्य सब। ४ मु आइ परे बल चरन पै दुलहा। ५. मु रची। ६. कां० फिरयो। ७. मु० तेरे।

जरासन्ध वध—

८२ " सांप जु मार्यो चाहिये दियो पाहुने हाथ " ॥
दियो पांहुने हाथ, नाथ श्रीकृष्ण पधारे ।
अर्जुन भीमहिं संग[१] लियें तब ही ललकारे ॥
जरासन्ध सों[२] मांगि तबै रन कियो सुहायो ।
भमिसेन बलवन्त सिंह कों मारि गिरायो ॥
आइ[३] कृष्ण ठाड़े भए लै अर्जुन कों साथ ।
" सांप जु मार्यो चाहिये दियो पाहुने हाथ" । ८२ ॥

शिशुपाल वध--

८३ " बरस दिना के कातनें एकै कपरा होय" ।
एकै कपरा होय, खोइ घर चेदिप[४] आयो ।
राजसूय के बीच बक्यो गारी मन भायो ॥
एकै आसन बैठि गारि सत दीनी हरि को ।
एकै गारी मानि आनि सिर काट्यो अरि को ।
सिर[५] काट्यो शिशुपाल कौ कहत बैन मुख जोय ।
बरस दिना के कातनें एकै कपरा होय " ॥ ८३ ॥

---

१. मु. लियो संग सब हे लल० । २. मु० को मारि-गरद कीयो जु सुहायो । ३. कॉ: राइ कृष्ण ठाड़े रहे लै० । ४ मु० चेदी । ५ कॉ० धरि काट्यो सिर धार सों कहत० ।

शाल्व प्रसङ्ग—

८४ "डेढ सुंहारी छाक में परसे ही तें गीत" ।
परसे ही तें गीत मीत,[1] आये हरि चितु करि ।
पांडव कुन्ती काज हस्तिनापुर में हित धरि[2] ॥
गयो द्वारिका शाल्व नगर लोहे कौ लैकें ।
इतनो बल[3] कछु नांहि आप ही मुखिया ह्वैकें ॥
एकै मुखिया कहत है उग्रसेन की[4] नीत ।
"डेढ़ सुंहारी छाक में परसे ही तें गीत" ८४ ॥

दन्तवक्र प्रसङ्ग—

८५ "आंधो[5] बाटै जेवरी पाछें बछरा खाय" ।
पाछें बछरा खाय, धाय मार्‌यों शिशुपाले ।
दंतवक्र तब भागि[6] चलो अपने ही आलै ॥
तहां[7] विदूरथ दौरि जात पाछें सुधि नांही ।
पहुंचे हरि जू जाइ[8] मारि रदवक्र तहाँ ही ॥
तहाँ बोलि ऊधौ कहै तू क्यों भाजै जाय ।
"आँधो बांटै जेवरी पाछें बछरा खाय" ॥ ८५ ॥

१- मु० मातु हरि आये चित धरि ।
२- मु० करि । ३- मु० छल । ४- कां० करि । ५ मु० अंधा ।
६- मु० भाजि चलो है अपनो जी लै । ७- मु० तब हि ।
८- मु० आइ हन्यो दन्तवक्र ।

८६ "धोबी बेटा चांद सो सीटी और फटाक"।
सीटी और फटाक, बांधि सब असुर संहारे।
दन्तवक्र कों मारि तबै[1] हथियार जु डारे॥
धरनी[2] बोझ उतारि और कर सोचत जी में।
कौरव पाण्डव जोरि लरायो[3] अर्जुन भीमें॥
भीम कहत हरिजू सुनो तेरे नटा[4] सटाक।
"धोबी बेटा चांद सो सीटी और फटाक" ॥८६॥

सूतवध--

८७ "बाप न मारी पींडुकी[5] बेटा तीरन्दाज"।
बेटा तीरन्दाज, राज[6] तजि बन हिं पधारे।
तीरथ कों मिसु किये हिये अति क्रोध निहारे।
चले जात बलभद्र नैमिषारन[7] बन आए।
श्रीवसुदेव सपूत सुत कों मारि गिराए॥
गिरे[8] देखि सौनक कहै लीन्हे सबै समाज।
"बाप न मारी पींडुकी बेटा तीरन्दाज" ॥ ८७॥

१- मु० तबहिं हरि अस्त्र जु०। २- मु० भार उतार्यो धरनि और०। ३- मु० लरे है। ४- कां० नटाक। ५- का० पींदडी ६-मु० तबै बन मांहि सिधारे। तीरथ के मिस कियो आन तंह क्रोध अबारे। ७- कॉं० बन नैमिष आए। ८- मु० गिरो।

सुदामा प्रसङ्ग--

८८ सपति होइ तो घर भलौ नातर भलौ विदेस ।
नातर भलौ विदेस, कहति नारी[१] निज पति सों ॥
सुनो सुदामा कन्त कहो[२] द्वारावति-पति सों ।
खैवे को नहिं अन्न वसन[३] पहिरन कों नांहीं
बालक बहु बिललात[४] नाथ तुम जाहु उहां ही ।
जाहु उहां ही चित्त[५] करि निरखो कृष्ण सुरेश ॥
" सपति होइ तो घर भलौ नातर भलौ विदेस" ॥८८॥

८९ " आंखों[६] देखे चेतना मुख देखे व्यौहार ।
मुख देखे व्यौहार, नारि के पठए आए ।
विप्र सुदाम हिं[७] देखि कृष्ण अति ही सुख पाए ।
दोऊ चरन पखारि[८] सीस चरनोदक धार्यो ॥
भामी पठयो मोहि कहा कछु[९] बचन उचार्यो ।
बचन उचार्यो प्रीति करि सुतिन द्विज मित्र उदार ।
"आंखों देखे चेतना मुख देखे व्यौहार" ॥८९॥

१- का० नागरि निज०। २-कॉ० सन्त सुख दायक अति सों। ३- का० वस्त्र। ४- मु० बिल्लाय। ५ मु० प्रीति सों निरखो। ६-कॉ० तांबा। ७-का० सुदामा निरखि कृष्ण अति ही मन भाए। ८-का० पछालि माथ पर जल सों धारे। ९-कॉ० यों वचन उचारे।

९० "आप विनौरा बापुरो पूत भयो चौतार"।
पूत भयो चौतार, सुदामा हरि पै आयो[1]।
आदर सों[2] प्रभु राखि, द्रव्य बहु घर हिं पठायो[3]॥
विदा होइ चलि जाइ गेह परिपूरन देख्यो।
कृष्ण कृपा[4] उर आनि धन्य आपुनपौ लेख्यों॥
"लेख्यों आपु हिं[5] धन्निमन चित कौ परम उदार।
"आप विनौरा बापुरो पूत भयो चौतार" ॥ ९० ॥

सुभद्रा हरण—

९१ "मार्‌यो घोंटू आइ कें फूट्यो जाइ लिलार"॥
फूट्यो जाइ लिलार सुभद्रा अर्जुन हरियो।
सुनत बात बलदेव साजि रथ अति रिस करियो[6]॥
लीन्हे कृष्ण बुलाइ आप[7] इह बचन उचारे।
कह्यो व्याह की रीति प्रीति करिके उर धारे॥
धारि क्रोध बल कहत हैं याकौ व्याह विचार।
"मार्‌यो घोंटू आइ कें फूट्यो जाइ लिलार" ॥ ९१ ॥

१- मु० आए। २- कां० याकौ राखि०। ३- मु० पठाए।
४- मु० कृष्ण चरन उर धारि धन्य अपनो कर लेखो।
५-मु०लेखो अपनो मानि धन चित०। ६-मु०भरयो। ७-कॉ०आइ।

कुरु क्षेत्र मिलाप—

९२ "चार दिना की चांदनी फेरि अँधेरी रात"।
फेरि अँधेरी रात, ग्रहन कुरु-क्षेत्र पधारे।
जादौ पांडौ भूप और नन्दादिक न्यारे ।
सब सो भयो मिलाप आप[१] गोपिन सों खेलैं।
बहुत दिनन कौ बिरह मिट्यो भुज कंठहिं मेलैं[२] ॥
मेलै पिय ग्वालिनि कहत मिले आपुनी जाति।
"चार दिना की चांदनी फेरि अँधेरी रात" ॥९२॥

द्रोपदी वार्तालाप—

९३ "मो पिय बात न बूझहीं[३] धन्य सुहागिनि नांउ"।
धन्य सुहागिनि नांउ द्रोपदी पूछति भामा ।
तैं क्यों[४] करि बस किये पंच भरता निज वामा ॥
कहत द्रोपदी बैन[५] सैन दै रुक्मिनि की दिसि।
कृष्ण भए आधीन रहत हैं[६] तेरे अहनिसि।
अहनिसि सतभामा कहत बसति कौन से[७] गांउ।
"मो पिय बात न बूझहीं धन्य सुहागिनि नांउ"॥९३॥

१- मु० आइ। २- कॉ० झेलैं। ३- मु० पूछहीं। ४- मु० कैसे र। ५- मु० वचन सुनो दै। ६- मु० वे। ७- मु. कौन के।

श्रुतदेव प्रसङ्ग--

९४ "भुस ऊपर कौ लीपनो ज्यों बारू की भींत"।
ज्यों बारू की भींत प्रीति श्रुत[1] देव जु कीने।
तहाँ पधारे कृष्ण देव बहुलास प्रवीने।
तिन कों ज्ञान बताइ करी प्रभु अपनी छाया।
नीकें ध्यान लगाइ हृदै हरि-रूप समाया॥
माया गई विलाइ कें देखो वाही रीत।
" भुस ऊपर कौ लीपनो ज्यों बारू की भींत" ॥९४॥

कुन्ती कृष्ण सम्वाद—

९४ " भात लपेट्यो[2] साग है साग लपेट्यो भात"।
साग लपेट्यो भात मात[3] कुन्ती यह पूछति।
अहो[4] कृष्ण समुझाइ कहो अपनी नीकी[5] गति॥
कौन तात, को मात, रूप तुव[6] कैसो है हो।
कहत कृष्ण समुझाइ कहा तुम यामें लै हो॥
लैहो तुम या में कहा? योंहीं बीतत[7] जात।
"भात लपेट्यो साग है साग लपेट्यो भात" ॥९५॥

१- मु० सुख हरिजू कीन्हे। २- मु० लपेटे। ३- मु० साथ।
४- मु० यही। ५- मु० कैसे। ६- मु० लह। ७- म० बातन।

निर्लेपता —

९६ "करै करावै आपही सिर औरन के देय।"
सिर औरन के देइ जरा[1] सुत भीम संघार्‌यो।
अर्जुन बान लगाइ कर्ण संग्राम पछार्‌यो॥
द्विविद प्रलम्ब गिराइ सुत मारे बलदाऊ।
कोपि[2] सिखण्डी आइ[3] पितामह धरा धराऊ॥
धरि इतने को नांउ हरि आपुइ[4] प्रानन लेय।
"करै करावै आप ही सिर औरन के देय"॥ ९६

देवस्तुति—

९७ "जो दिन जाइ[5] आनन्द सों जीवन[6] कौ फल सोइ"
जीवन कौ फल सोइ द्वारिका[7] कृष्ण बिराजें।
सकल[8] कुटुम्ब समेत हेत सों बहु विधि छाजें॥
ब्रह्मा, नारद, रुद्र, व्यास,[9] सनकादिक आवें।
चित लगाइ सुख पाइ कृष्ण के गुनगन[10] गावें।
गुन गावे विनती करें श्रीहरि[11] सुख तन जोइ।
"जो दिन जाइ आनन्द सो जीवन कौ फल सोइ॥९७

१- मु० भीम जरासिंधहि संघार्‌योः। २ मु भये। ३- आप। ४- कां० अपुने पर नहि लेय। ५- मु० जात। ६- जीतव (जीवत) ७- मु० कुटुम्ब सों बहु विधि साजें। ८- नाती पुत्र समेत हेत सों अधिक विराजें। ९- मु० आ। १०- कां० गुन कों। मु० ११-सुन्दर।

यादव संहार—

९८ " सौगाहा[1] सुआ पढ्या अन्त विलाई खाय " ।
अन्त विलाई खाय, कोटि छप्पन हैं जादौ ।
अगनित कुल विस्तार बूंद वरखैं ज्यों भादौं ।
पंडित, दाता, सूर, चतुर, गुन गन अधिकाए[2] ।
द्विज को[3] श्राप दिवाइ प्रभास हिं सबै[4] लराए ॥
लरि कै मो संहार सब श्रीशुक[5] कहत बनाय ।
" सौ गाहा सूआ पढ्यो अन्त विलाई खाय " ॥९८॥

अद्भुत चारित्र्य—

९९ "कहूँ कहूं गोपाल की गई सिटल्ली[6] नाहिं " ।
गई सिटल्ली नाहि, दुष्ट सब मुक्त किये हैं ।
देखत, बोलत, परसि, भाजि के चरन छिये[7] हैं ॥
आपु चले निज धाम सकल जादौ[8] संहारे ।
उद्धव कों हां छांडि ज्ञान के बचन उचारे ।
चार भक्त ह्याही रहे, दुष्ट मुक्त ह्वै जाँहि ।
" कहूं कहूं गोपाल की गई सिटल्ली नाहिं " ॥९९॥

१- मु० सोय गया जो बाद में अन्त० । २- मु० अधिकाई । ३- मु० द्विज से । ४- मु० लरै लराई । ५- मु० जादौ कुल अधिकाय । ६- कां० सिटल्यो । ७- मु० गए हैं । ८- मु० जादव ऊ सिधारे ।

उपसंहार—

१०० " एक पन्थ द्वै[1] काज " ।

एक पन्थ द्वै काज, साउ[2] कीन्हे बहुतेरे ।
ब्रज मथुरा के बीच द्वारिका करि अरुझेरे[3] ॥
लीला[4] अगम अपार व्यास-सुत श्रीशुक गावें ।
इह[5] कामना परलोक मुक्ति जो सुनै सुनावें ॥
सुनै सुनावें चित्त दै[6] भावें श्रीब्रजराज ।
उपखानें अरु हरि-चरित[7] "एक पन्थ द्वै काज" ॥१००।

१०१ " सोनो और सुगन्ध ।

सोनो और सुगन्ध, कृष्ण-लीला इह गाई ।
दशम चरित्र अपार कहां लगि कहों सुनाई[8] ॥
उपखाने हूँ घने जितिक[9] मेरे मन भाये[10] ।
कौतुक[11] जियमें जानि अबै मैं बरनि सुभाये ॥
सुनि के भक्त कृपा करौ, बांचो बन्यो प्रबन्ध ।
'जगतनन्द'[12] बरनन कियो "सोनो और सुगन्ध" ॥१०

इतिश्री कवि जगतानंद कृत उपखाने सहित-दशमकथा सम्पूर्ण

१- मु० द्वो । २- कां० गज । ३- मु० उर । ४- मु० व्यास र सुकदेव आदि सब ही मिलि गावें । ५- मु० इहै काम अरु मे कहै अरु सुनै० । ६- मु० धरि । ७- मु० कथा । ८- कां० सुहा ९ मु० जिते । १०. भाई । ११ मु. सुख दायक कायक गुण को परम सहाई । १२. मु० कौतुक मति अरु मुक्ति गति सो १३ मु. चरित्र ।

'शुद्धाद्वैत एकेडमी' की स्थायी सदस्यता

१. संरक्षक—

'अ' आचार्यवर्ग-जो निःशुल्क रहेंगे तो भी अपनी इच्छानुसार आर्थिक सहाय्य प्रदान कर सकेंगे।

'ब' नृपतिवर्ग-जो कम से कम १०००) एककालिक प्रदान करेंगे

'स' श्रेष्ठीवर्ग-जो १०००) तक एककालिक प्रदान करेंगे।

२. सहायक—

'अ' विशिष्ट विद्वान निःशुल्क, जो साम्प्रदायिक होंगे, अथवा साम्प्रदायिक साहित्य के प्रेमी होने के साथ साथ किसी विषय के लब्धप्रतिष्ठ विद्वान होंगे।

'ब' प्रत्येक धनिक-जो कम से कम ५००) एककालिक साहाय्य देंगे।

३. हितैषी—

'अ' साम्प्रदायिक वाङ्मय क्षेत्र के प्रेमी या कार्यशील व्यक्ति निःशुल्क होंगे।

'ब' प्रत्येक सद्‌ ग्रहस्थ जो २५०) एककालिक सहायता देंगे।

४. साधारण—

'अ' आजीवन-जो १२५) एककालिक प्रदान करेंगे।

'ब' वार्षिक—जो ३) रुपया प्रतिवर्ष देते रहेंगे।

'स' सहयोगी-जो साम्प्रदायिक अन्य संस्थाओं की सदस्यता प्रमाणित कर देने पर शु एकेडमी को १) वार्षिक देते रहेंगे।

५. विशिष्ट-इन श्रेणियों के अतिरिक्त जो सज्जन वार्षिक विशेष साहाय्य प्रदान करेंगे उन्हें विशेष सुविधा प्रदान की जावेगी।

६. कार्यकर्ता—इनमें शुद्धाद्वैत सम्प्रदाय क्षेत्र में पूर्ण उत्साह और परिश्रम से कार्य करने वाले योग्य व्यक्ति निःशुल्क रहेंगे।

सदस्यों को सुविधायें—समस्त सदस्यों को प्राप्त सुविधायें जानने के लिये नियमावली मंगाइये।